मैं चाणक्य बोल रहा हूँ

सं. महेश शर्मा

मैं चाणक्य बोल रहा हूँ

सं. महेश शर्मा

प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली

अनुक्रमणिका

42- दया

43- द्वंद

44- दान

45- दीपक

46- दीर्घायु

47- दुखी

48- दुर्जन/दुराचारी

49- दुश्मन

50- दोष

51- द्वेष

52- धन

53- धर्म

54- निंदा

55- निर्धन

56- निर्लोभी

57- नेत्र-ज्योति

58- परदेश

59- परिश्रम

60- परीक्षा

61- परोपकार

62- पवित्र

63- पिता

64- पुण्य/मोक्ष

चाणक्य: संक्षिप्त परिचय

पंद्रह वर्षीय एक बालक अपनी माँ के पास बैठा हुआ था। माँ ने अपने एकमात्र लाडले पुत्र की ओर देखकर कहा,"बेटा, हम बहुत गरीब हैं। तेरे पिता ने अत्यंत गरीबी में रहकर अपने दिन काटे हैं। तू ही अपने पिता और मेरी भावी आशाओं का केंद्र है। मैं चाहती हूँ कि तू अपने समय का एक आदर्श महापुरुष बने, इसलिए मैं नित्य नील सरस्वती की उपासना करती हूँ।"

अपनी माँ के प्रेरक वचन सुनकर बालक ने अत्यंत श्रद्धा से उनकी ओर देखा और उसे लगा कि उनके सामने साक्षात् नील सरस्वती ही खड़ी हैं।

बालक ने कहा, "मेरे लिए तो आप ही साक्षात् नील सरस्वती हैं। मैं आपके तथा पिताजी के विश्वास को झुठलाऊँगा नहीं।"

एक दिन एक ऐसी घटना घटी, जिसके कारण बालक की माँ अत्यंत उदास हो गई। एक ज्योतिषी उनके घर पधारे और अपने पुत्र के भविष्य के प्रति आश्वस्त होने के लिए माँ ने अपने पुत्र की जन्म-कुंडली उन्हें दिखलाई।

जन्म-कुंडली देखकर ज्योतिषी बोला, "मैंने आज तक ऐसी विलक्षण जन्म-कुंडली नहीं देखी। इस बालक की जन्म-कुंडली में तो ग्रहों का ऐसा योग पड़ा है कि वह आगे चलकर यशस्वी चक्रवर्ती सम्राट् बनेगा।

यह भविष्यवाणी मिथ्या नहीं हो सकती। यदि इस कथन की सत्यता की जाँच करनी हो तो अपने पुत्र के सामने के दाँत को गौर से देखना। उस पर नागराज का चिह्न अंकित होगा।"

प्रसन्न होने के स्थान पर माँ चिंतित हो गई और सोचने लगी कि चक्रवर्ती सम्राट् बन उनका पुत्र उन्हें व्यस्त होने के कारण समय नहीं दे पाएगा। पुत्र-वियोग की चिंता में उनकी आँखों में आँसू आ गए।

उसी समय बालक वहाँ आ गया और माँ की आँखों में आँसू देखकर कारण पूछा। बहुत हठ करने पर माँ ने अपने मन की आशंका को बालक के सामने प्रकट कर दिया।

बालक ने दर्पण में जाकर अपने दाँतों को देखा। वास्तव में वहाँ नागराज का चिह्न अंकित था। उसने बिना किसी विलंब के एक पत्थर उठाया और एक ही प्रहार से उस दाँत को तोड़ दिया। बालक ने रक्त से सना दाँत उठाकर माँ के चरणों में रख दिया और कहा, "माँ, अब नागराज का चिह्न अंकित दाँत ही नहीं रहा तो मेरे चक्रवर्ती सम्राट् बनने का प्रश्न ही नहीं। मुझे तो मेरी माता का वात्सल्य ही चाहिए।"

माँ ने अपने पुत्र को सीने से लगा लिया।

यही बालक आगे जाकर 'चाणक्य' नाम से प्रसिद्ध हुआ। नागराज के चिह्नवाला दाँत टूट जाने से

विष्णुगुप्त चाणक्य चक्रवर्ती सम्राट् तो नहीं बन सके, पर अपनी माँ के आशीर्वाद से चक्रवर्ती सम्राट्-निर्माता अवश्य ही बन गए और उनके नीतिशास्त्र पर अनेक चक्रवर्ती सम्राट् निछावर हो गए।

चाणक्य को भारत के एक महान् राजनीतिज्ञ और अर्थशास्त्री के रूप में जाना जाता है। उनके पिता चणक मुनि एक महान् शिक्षक थे। कहा जाता है कि चाणक्य का जन्म तक्षशिला या दक्षिण भारत में 350 ई.पू. के आसपास हुआ था। उनकी मृत्यु का अनुमानित वर्ष 283 ई.पू. बताया गया है।

चाणक्य को विष्णुगुप्त, वात्स्यायन, मल्लनाग, पक्षिलस्वामी, अंगल, द्रमिल और कौटिल्य भी कहा जाता है। कहा जाता है कि पूत के पाँव पालने में ही दिख जाते हैं। यह बात चाणक्य पर शत प्रतिशत सही साबित होती है। जरा इन बातों पर गौर कीजिए-

- जन्म के समय से ही चाणक्य के मुँह में पूरे दाँत थे। यह राजा या सम्राट् बनने की निशानी थी।

  लेकिन चूँकि उनका जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ था, इसलिए यह बात सच नहीं हो सकती थी। इसलिए उनके दाँत उखाड़ दिए गए और यह भविष्यवाणी की गई कि वे किसी और व्यक्ति को राजा बनवाएँगे और उसके माध्यम से शासन करेंगे।
- चाणक्य में जन्मजात नेतृत्वकर्ता के गुण मौजूद थे। वे अपने हमउम्र साथियों से कहीं अधिक बुद्धिमान और तार्किक थे।
- चाणक्य कटु सत्य को कहने से भी नहीं चूकते थे। इसी कारण पाटलिपुत्र के राजा घनानंद ने उन्हें अपने दरबार से बाहर निकाल दिया था। तभी चाणक्य ने प्रतिज्ञा की थी कि वे नंद वंश का समूल नाश कर देंगे।
- अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए चाणक्य ने बालक चंद्रगुप्त को चुना, क्योंकि उसमें जन्म से ही राजा बनने के सभी गुण मौजूद थे।
- चंद्रगुप्त के कई शत्रु थे। राजा नंद भी उनमें शामिल था। उसने चंद्रगुप्त को कई बार जहर देकर मारने की कोशिश की। अतः चंद्रगुप्त की जहर-प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने के लिए चाणक्य ने उसे भोजन में थोड़ा-थोड़ा जहर मिलाकर देना आरंभ कर दिया।
- चंद्रगुप्त को भोजन में जहर दिए जाने की बात ज्ञात नहीं थी, इसलिए एक दिन उसने अपने भोजन में से थोड़ा सा भोजन अपनी पत्नी को भी दे दिया, जो नौ माह की गर्भवती थी। जहर की तीव्रता वह नहीं झेल पाई और काल-कवलित हो गई। लेकिन चाणक्य ने उसका पेट चीरकर नवजात शिशु को बचा लिया।
- वह शिशु बड़ा होकर एक योग्य सम्राट् बिंदुसार बना। उसका सुबंधु नाम का एक मंत्री था। सुबंधु चाणक्य को फूटी आँखों पसंद नहीं करता था। उसने बिंदुसार के कान भरने शुरू कर दिए कि चाणक्य उसकी माता का हत्यारा है।
- तथ्यों को जाँचे-परखे बगैर वह चाणक्य के विरुद्ध खड़ा हो गया। लेकिन जब उसे सच्चाई ज्ञात हुई तो वह बहुत शर्मिंदा हुआ और अपने दुर्व्यवहार के लिए उसने चाणक्य से क्षमा

माँगी। उसने सुबंधु से भी कहा कि जाकर चाणक्य से क्षमा माँगे।

- सुबंधु बड़ा कुटिल व्यक्ति था। चाणक्य से क्षमा माँगने का बहाना करते हुए उसने धोखे से उनकी हत्या कर दी। इस प्रकार राजनीतिक षड्यंत्र के चलते एक महान् व्यक्ति के जीवन का अंत हो गया।

चाणक्य के पिता चणक मुनि एक शिक्षक थे, इसलिए शिक्षा का महत्त्व वे अच्छी तरह से समझते थे। अपने पुत्र को उन्होंने अच्छी शिक्षा प्रदान की। कम उम्र में जब बच्चे बोलना भी ठीक से शुरू नहीं कर पाते हैं, चाणक्य ने वेदों का अध्ययन आरंभ कर दिया था। अल्पकाल में ही वेदों में पारंगत होकर चाणक्य का झुकाव राजनीति की ओर हुआ। जल्दी ही वे राजनीति की बारीकियों को समझने लगे। वे समझ गए कि विरोधियों के खेमे में अपने आदमी कैसे शामिल किए जाते हैं और दुश्मनों की जासूसी कैसे की जाती है। इसके अलावा उन्होंने अर्थशास्त्र एवं हिंदू शास्त्रें का भी गहन अध्ययन किया और बाद में 'चाणक्य नीति', 'नीतिशास्त्र' एवं 'अर्थशास्त्र' जैसे महान् व कालजयी ग्रंथों की रचना की।

तक्षशिला (अब पाकिस्तान में) उन दिनों भारत के उच्च शिक्षा-संस्थानों में से एक था, जहाँ चाणक्य ने व्यावहारिक व प्रायोगिक ज्ञान हासिल किया। वहाँ के शिक्षक उच्च कोटि के विद्वान् होते थे, जो प्रायोगिक व व्यावहारिक रूप से छात्रें को शिक्षित करते थे। वहाँ विज्ञान, आयुर्वेद, दर्शन, व्याकरण, गणित, अर्थशास्त्र, ज्योतिष विद्या, भूगोल, खगोल-शास्त्र, कृषि विज्ञान, औषध विज्ञान आदि की शिक्षा प्रदान की जाती थी।

विद्यार्थी जीवन में चाणक्य की लोकप्रियता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि लोग उन्हें कौटिल्य और विष्णुगुप्त आदि अनेक नामों से भी पुकारते थे।

तक्षशिला में शिक्षा समाप्त करके चाणक्य वहीं शिक्षक के रूप में कार्य करने लगे। वे विद्यार्थियों के आदर्श थे। उनके एक आदेश पर विद्यार्थी सबकुछ करने को तैयार हो जाते थे। उनके दो शिष्यों-भद्रभट्ट और पुरुषदत्त का उल्लेख अनेक स्थानों पर आया है। चाणक्य के लक्ष्य को प्राप्त करने में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान बताया गया है। यह भी कहा जाता है कि वे दोनों चाणक्य के गुप्तचर थे और उनके शत्रुओं के बारे में जानकारियाँ जुटाकर उन तक पहुँचाया करते थे।

इसी दौरान अपने सूत्रें से चाणक्य को ज्ञात हुआ कि यूनान का सम्राट् सिकंदर भारत के कमजोर शासकों पर आक्रमण करने वाला है। इस प्रकार भारत की एकता पर खतरा मँडरा रहा था। इस अराजक स्थिति का लाभ उठाते हुए पाटलिपुत्र के कुटिल शासक घनानंद ने अपनी प्रजा को निचोड़ना आरंभ कर दिया। विदेशी आक्रमण से लोहा लेने की आड़ में उसने जनता पर तरह-तरह के कर थोप दिए। एक ओर विदेशी हमलावर कमजोर राज्यों पर टकटकी लगाए थे तो दूसरी ओर पड़ोसी देश अपने कमजोर पड़ोसियों को हथियाने की फिराक में थे। चाणक्य विदेशी और भीतरी दोनों खतरों पर नजर रखे हुए थे। इस उथल-पुथल ने उनकी रातों की नींद छीन ली और उन्होंने तक्षशिला को त्यागकर पाटलिपुत्र लौटने का इरादा कर लिया।

पाटलिपुत्र (वर्तमान नाम पटना) का इतिहास राजनीतिक रूप से बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। दिल्ली

की तरह यह भी कई बार बसा और उजड़ा है। चीन के जाने-माने यात्री फाह्यान ने 399 ई.पू. में पाटलिपुत्र की यात्र की थी और इसे एक संपन्न व प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर नगर कहा था। उसी समय एक दूसरे चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इसका वर्णन रोड़े, पत्थर और ध्वंसावशेष के नगर के रूप में किया था। शिशुघ्नवंशी ने गंगा के दक्षिणी किनारे पर इस शहर की स्थापना की। समय-समय पर इसके नाम बदलते रहे। इसे पुष्पपुर, पुष्पनगर, कुसुमपुर, पाटलिपुत्र और अब पटना कहा जाता है।

जब चाणक्य यहाँ पहुँचे, यह ज्ञानियों और विद्वानों का आदर करने वाले शहर के रूप में जाना जाता था। नए विचारों की उत्पत्ति और राज्य के विकास के लिए देश भर के विद्वान् लोगों को यहाँ आदरपूर्वक आमंत्रित किया जाता था। इसलिए देश की एकता बनाए रखने का अभियान चाणक्य ने यहीं से आरंभ करने का विचार बनाया।

पाटलिपुत्र का राजा घनानंद एक अनैतिक और क्रूर स्वभाव का व्यक्ति था। उसका बस एक ही उद्देश्य था—किसी भी तरह धन-संचय करना। वह धन के मामले में पूरी तरह असंतुष्ट था। प्रजा को वह काँटे की तरह खटकता था, लेकिन कोई उसके खिलाफ बोलने का दुःसाहस नहीं कर पाता था। प्रजा तरह-तरह के करों से दबी हुई थी। कर-वसूली का उद्देश्य केवल राजा की स्वार्थ-पूर्ति करना था। चमड़े, लकड़ी और पत्थरों पर भी कर-वसूली होती थी। घनानंद का खजाना पूरी तरह भरा था, फिर भी उसके लालच का अंत नहीं था।

जब चाणक्य पाटलिपुत्र पहुँचे तो राजा घनानंद के व्यवहार में थोड़ी नरमी आई। वह गरीबों की मदद करने लगा। उसने गरीबों की मदद के लिए एक समिति का गठन किया। इस समिति में विद्वान् और समाज के प्रभावशाली लोग शामिल थे।

चाणक्य भी चूँकि तक्षशिला के महान् विद्वान् थे, इसलिए उन्हें भी इस समिति में शामिल कर लिया गया। बाद में चाणक्य इस समिति 'सुनघा' के प्रमुख भी बनाए गए। समिति के प्रमुख अकसर राजा से मिलते रहते थे। इसी क्रम में चाणक्य जब पहली बार घनानंद से मिले तो उनकी कुरूपता के कारण उन्हें अपमान झेलना पड़ा। समय के साथ चाणक्य के प्रति घनानंद की घृणा बढ़ती ही गई। चाणक्य के कटु किंतु सत्य शब्द भी घनानंद को चुभते थे। इस प्रकार घनानंद और चाणक्य के बीच शत्रुता बढ़ती गई। चाणक्य राजा की चापलूसी के स्थान पर पेशेवर की तरह काम करते थे। वे संक्षेप में साफ-साफ अपनी बात रखते थे। राजा को चाणक्य का यह व्यवहार बड़ा अरुचिपूर्ण लगता था। इसलिए एक दिन उसने चाणक्य को उनके पद से हटा दिया और राजमहल से निकाल दिया। इस अपमान से चाणक्य तिलमिला उठे और उन्होंने शपथ ली कि वे तब तक अपनी चोटी नहीं बाँधेंगे, जब तक कि घनानंद को सिंहासन से न हटा दें।

राजा से अपमानित होकर चाणक्य जंगल में अपनी कुटिया की ओर बढ़ रहे थे। एकाएक एक काँटे ने उनका पैर बेध दिया। वे लड़खड़ाकर तेजी से सँभले। विद्वान् चाणक्य का परिस्थितियों से निबटने का अपना अलग ही तरीका था। उन्होंने काँटे के उस पौधे को देखा, जिसका काँटा उन्हें लगा था। उस समय वे गुस्से में थे और उसे अनियंत्रित नहीं होने देना चाहते थे। इसलिए शांतिपूर्वक चिलचिलाती धूप में बैठ गए और काँटेदार पौधे की जड़ें उखाड़ने लगे। थोड़ी देर बाद

जब जड़ सहित पूरा पौधा उखड़कर बाहर आ गया तो उसे एक ओर फेंककर उन्होंने फिर से अपनी राह पकड़ ली।

जब चाणक्य काँटेदार पौधे को उखाड़ रहे थे तो उनकी तन्मयता को एक युवक गौर से देख रहा था। वह चंद्रगुप्त था-मौर्य साम्राज्य का भावी शासक। उसका चेहरा तेजपूर्ण था। चाणक्य की दृढ़ता देखकर वह प्रभावित था और उस ज्ञानी पुरुष से बात करना चाहता था।

वह चाणक्य के निकट पहुँचा और उनसे आदरपूर्वक बात करने लगा। चाणक्य ने उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि के बारे में बात करते हुए पूछा, ''तुम कौन हो? कुछ चिंतित दिखाई पड़ते हो?''

युवक चंद्रगुप्त ने आदरपूर्वक आगे झुकते हुए कहा, ''श्रीमान, आपका अनुमान ठीक है। मैं बहुत मुसीबत में हूँ लेकिन अपनी परेशानी बताकर मैं आपको परेशान नहीं करना चाहता।''

चाणक्य ने उसे दिलासा देते हुए कहा, ''तुम निस्संकोच अपनी परेशानी मुझे बता सकते हो। यदि मेरे वश में हुआ तो मैं तुम्हारी सहायता अवश्य करूँगा।''

''मैं राजा सर्वार्थसिद्धि का पौत्र हूँ। उनकी दो पत्नियाँ थीं—सुनंदा देवी एवं मुरा देवी। सुनंदा के नौ पुत्र हुए, जो नवनंद कहलाए। मुरा के एक पुत्र था, जो मेरे पिता थे। नवनंदों ने बार-बार मेरे पिता को जान से मारने की कोशिश की। हम सौ से अधिक भाई थे। ईर्ष्यावश नवनंद हम सभी की जान लेने पर तुले हुए थे। किसी तरह से मैं बचा रहा, पर मेरा पूरा जीवन बरबाद हो गया है। मैं नंद से प्रतिशोध लेना चाहता हूँ, जो इस समय पाटलिपुत्र पर राज्य कर रहे हैं।''

दुश्मन का दुश्मन दोस्त। घाव खाए चाणक्य को नंद के विरुद्ध एक साथी मिल गया था। चंद्रगुप्त की कहानी सुनकर चाणक्य को गहरा धक्का लगा। भावना से भरकर उन्होंने प्रतिज्ञा की कि वे नंद वंश का नाश करके चंद्रगुप्त को उसकी सही जगह पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ़ करने तक चैन से नहीं बैठेंगे।

चाणक्य ने कहा, ''मैं तुम्हें राजपद तक पहुँचाऊँगा, चंद्रगुप्त।''

उस दिन से चंद्रगुप्त और चाणक्य क्रूर व अत्याचारी घनानंद के कुशासन का अंत करने में जुट गए।

चंद्रगुप्त के बारे में ठीक-ठीक कहीं कुछ नहीं लिखा गया है। जन्म-स्थान, पारिवारिक पृष्ठभूमि और उसके जीवन से जुड़ी अन्य जानकारियाँ उपलब्ध नहीं हैं। उसके माता-पिता के बारे में अलग-अलग ग्रंथों में अलग-अलग बातें लिखी हुई हैं। वास्तव में वह मोरिय समुदाय से संबद्ध था। इसी के बाद संभवतः उसे चंद्रगुप्त मौर्य नाम दिया गया और उसका राजवंश मौर्य वंश के नाम से जाना गया। उसकी माता के बारे में कहा जाता है कि वह एक गाँव के मुखिया की बेटी थी। उसके पिता पिप्पलवन नामक जंगली इलाके के राजा थे, जो एक युद्ध के दौरान मारे गए थे। चंद्रगुप्त अपनी माता के साथ पाटलिपुत्र आया था।

चंद्रगुप्त में जन्मजात नेतृत्वकर्ता के गुण थे। बालकों में भी सब उसे अपना नेता मानते थे। बालकों के राजा के रूप में वह अपना दरबार लगाता था और न्याय करता था। साहस और सूझ-बूझ के गुण बचपन से ही उसमें दिखाई देने लगे थे। जब चाणक्य पाटलिपुत्र की गलियों से गुजर रहे थे तो उन्होंने एक सिंहासननुमा ऊँची चट्टान पर चंद्रगुप्त को राजसी अंदाज में बैठे देखा था। उसके सामने बालकों का समूह फरियादी बनकर फरियाद कर रहा था। चंद्रगुप्त का प्रभावान मुखमंडल और बुद्धिमत्तापूर्ण संभाषण सुनकर चाणक्य बहुत प्रभावित हुए थे।

सात-आठ साल तक चंद्रगुप्त ने शिक्षा ग्रहण की। उसके शिक्षकों का चयन स्वयं चाणक्य ने किया था। इसके बाद युद्ध-कला और शासन दोनों में चंद्रगुप्त पारंगत हो गया।

इतने वर्षों के दौरान चंद्रगुप्त और चाणक्य की मैत्री खूब फली-फूली थी। शत्रुओं का सामना करने के लिए उन्होंने एक बड़ी सेना संगठित कर ली थी। इस बीच चाणक्य और चंद्रगुप्त ने कई ऐतिहासिक घटनाएँ देखीं। दशकों तक भारतीय उपमहाद्वीप पर सिकंदर एवं कई अन्य हमलावरों ने आक्रमण किए। कहा जाता है कि चंद्रगुप्त और सिकंदर का आमना-सामना भी हुआ। चंद्रगुप्त के दुःसाहस और सख्त रवैए ने सिकंदर को रुष्ट कर दिया था। परिणामस्वरूप सिकंदर ने चंद्रगुप्त को बंदी बना लिया। चाणक्य का प्रशिक्षण चूँकि पूरा हो चुका था, इसलिए चंद्रगुप्त के युद्ध-कौशल को परखने के लिए उन्होंने उसे खुला छोड़ दिया था। सिकंदर की युद्ध-नीति का चाणक्य ने गहन अध्ययन किया था। साथ ही वे भारतीय शासकों की कमजोरियों के प्रति भी सचेत थे।

सीधा-सादा ग्रामीण बालक चंद्रगुप्त अब एक मजबूत सेनानायक बन गया था। चंद्रगुप्त और उसकी सेना को चाणक्य के दिमाग और महान् व्यक्तित्व से ताकत मिलती थी। उत्तरी भारत की स्वतंत्रता के उस युद्ध में, जहाँ चंद्रगुप्त शरीर था तो उसका मस्तिष्क थे चाणक्य।

अपने सेनानायकों की कमजोरी के चलते सिकंदर की ताकत भी घटने लगी थी। सिकंदर के रहते ही निकोसर नामक उसका एक वीर सेनानायक मारा गया। बाद में फिलिप नामक एक अन्य सेनानायक, जिसे दुर्जेय समझा जाता था, उसकी मौत ने सिकंदर को बुरी तरह तोड़कर रख दिया। बेबीलोन में सिकंदर की मृत्यु के बाद उसके सभी सेनानायक या तो मारे गए या खदेड़ दिए गए। 321 ई.पू. में सिकंदर के सैन्य अधिकारियों ने उसके साम्राज्य को आपस में बाँट लिया। यह तय हुआ कि सिंधु के पूर्व में उनका शासनाधिकार समाप्त हुआ। इस प्रकार उन्होंने स्वयं स्वीकार कर लिया कि भारत के उस हिस्से पर अब उनका अधिकार नहीं रहा।

घनानंद पर आक्रमण से पहले चाणक्य ने एक सुदृढ़ रणनीति तैयार की। चाणक्य ने शुरू में आक्रमण की नीति को शहर के मध्य भाग पर आजमाकर देखा, लेकिन उन्हें बार-बार पराजय का सामना करना पड़ा। अपनी रणनीति को बदलते हुए चंद्रगुप्त और चाणक्य ने इस बार मगध साम्राज्य की सीमाओं पर आक्रमण किया, लेकिन इस बार भी उन्हें निराशा ही हाथ लगी।

चंद्रगुप्त और चाणक्य ने पिछली गलतियों से सबक लेकर रणनीति में परिवर्तन किया और निकटवर्ती राजा पर्वतक (या पोरस द्वितीय) से मैत्री कर ली। अब पर्वतक, उसका भाई वैरोचक और पुत्र मलयकेतु अपनी सेनाओं के साथ उनकी सहायता के लिए आ गए। घनानंद को एक बड़ी

सेना का समर्थन प्राप्त था। उसके योग्य अमात्य राक्षस का सहयोग भी उसके लिए किसी वरदान से कम नहीं था। राक्षस एक योग्य और राजा का स्वामीभक्त अमात्य था। चाणक्य ने एक योजना तैयार करके नंद के खेमे में अपने गुप्तचर छोड़ दिए। थोड़े ही समय के भीतर नंद की कमजोरियाँ उन पर जाहिर हो गईं। दूसरी ओर घनानंद और अमात्य राक्षस चाणक्य के हमले से बचने की योजना बनाने में जुटे थे।

घनानंद और चंद्रगुप्त एवं चाणक्य के बीच हुए युद्ध का ब्योरा उपलब्ध नहीं है, लेकिन वह निश्चय ही एक भीषण और भयावह युद्ध था। उसमें घनानंद मारा गया। उसके पुत्र और संबंधी भी मारे गए। अमात्य राक्षस भी असहाय हो गया। इस प्रकार चाणक्य ने नंद वंश का समूल नाश कर दिया।

चाणक्य का प्रतिशोधपूर्ण जीवन व्यक्तियों को प्रतिशोध लेने की भावना को प्रेरित करता है लेकिन व्यक्तिगत प्रतिशोध चाणक्य का उद्देश्य नहीं था। वे चाहते थे कि राज्य सुरक्षित रहे, शासन सुचारु ढंग से चले और प्रजा सुख-शांतिपूर्वक रहे। उन्होंने लोगों की संपन्नता सुनिश्चित करने के लिए दो तरीके अपनाए। पहला, अमात्य राक्षस को चंद्रगुप्त का मंत्री बना दिया गया_ दूसरा, एक पुस्तक लिखी गई, जिसमें राजा के आचार-व्यवहार का वर्णन किया गया कि वह शत्रुओं से अपनी और राज्य की रक्षा कैसे करे तथा कानून-व्यवस्था को कैसे सुनिश्चित करे आदि।

कुछ संस्मरण

चाणक्य के संस्मरण भी उनकी असाधारण बुद्धिमत्ता और चातुर्य को परिलक्षित करते हैं। यहाँ उनके कुछ संस्मरण देना समीचीन जान पड़ता है। समय की कसौटी पर ये निश्चित ही चाणक्य के शाश्वत पदचिह्न हैं।

चाणक्य की तर्क-शक्ति

एक दिन चाणक्य का एक परिचित उनके पास आया और उत्साह से कहने लगा, "आप जानते हैं, अभी-अभी मैंने आपके मित्र के बारे में क्या सुना?"

चाणक्य अपनी तर्क-शक्ति, ज्ञान और व्यवहार-कुशलता के लिए विख्यात थे। उन्होंने अपने परिचित से कहा, "आपकी बात मैं सुनूँ, इसके पहले मैं चाहूँगा कि आप त्रिगुण परीक्षण से गुजरें।"

उस परिचित ने पूछा, "यह त्रिगुण परीक्षण क्या है?"

चाणक्य ने समझाया, "आप मुझे मेरे मित्र के बारे में बताएँ, इससे पहले अच्छा यह होगा कि जो कहें, उसे थोड़ा परख लें, थोड़ा छान लें। इसीलिए मैं इस प्रक्रिया को त्रिगुण परीक्षण कहता हूँ। इसकी पहली कसौटी है सत्य। इस कसौटी के अनुसार जानना जरूरी है कि जो आप कहने वाले हैं, वह सत्य है। आप खुद उसके बारे में अच्छी तरह जानते हैं?"

"नहीं।" वह आदमी बोला, "वास्तव में मैंने इसे कहीं सुना था, खुद देखा या अनुभव नहीं किया

था।"

"ठीक है।" चाणक्य ने कहा, "आपको पता नहीं है कि यह बात सत्य है या असत्य। दूसरी कसौटी है अच्छाई। क्या आप मुझे मेरे मित्र की कोई अच्छाई बताने वाले हैं?"

"नहीं।" उस व्यक्ति ने कहा।

इस पर चाणक्य बोले, "जो आप कहने वाले हैं, वह न तो सत्य है, न ही अच्छा। चलिए, तीसरा परीक्षण कर ही डालते हैं।"

"तिसरी कसौटी है उपयोगिता। जो आप कहने वाले हैं, वह क्या मेरे लिए उपयोगी है?"

"नहीं, ऐसा तो नहीं है।"

सुनकर चाणक्य ने आखिरी बात कह दी, "आप मुझे जो बताने वाले हैं, वह न सत्य है, न अच्छा और न ही उपयोगी, फिर आप मुझे बताना क्यों चाहते हैं?"

गरम खिचड़ी

एक समय की बात है, चाणक्य घनानंद के दरबार में हुआ अपना अपमान भुला नहीं पा रहे थे। शिखा की खुली गाँठ हर पल एहसास कराती कि घनानंद के राज्य को शीघ्रातिशीघ्र नष्ट करना है। चंद्रगुप्त के रूप में एक ऐसा होनहार शिष्य उन्हें मिला था, जिसे उन्होंने बचपन से ही मनोयोगपूर्वक तैयार किया था। अगर चाणक्य प्रकांड विद्वान् थे तो चंद्रगुप्त भी असाधारण और अद्भुत शिष्य था। चाणक्य बदले की आग से इतना भर चुके थे कि उनका विवेक भी कई बार ठीक से काम नहीं करता था। चंद्रगुप्त ने लगभग 5,000 सैनिकों की छोटी सी सेना बना ली थी। सेना लेकर उन्होंने एक दिन भोर के समय ही मगध की राजधानी पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर दिया। चाणक्य नंद की सेना और किलेबंदी का ठीक आकलन नहीं कर पाए और दोपहर से पहले ही घनानंद की सेना ने चंद्रगुप्त व उसके सहयोगियों को बुरी तरह मारा और खदेड़ दिया।

चंद्रगुप्त बड़ी मुश्किल से जान बचाने में सफल हुए। चाणक्य भी एक घर में जाकर छुप गए। वे रसोई के साथ ही कुछ मन अनाज रखने के लिए बने मिट्टी के निर्माण के पीछे छुपकर खड़े थे। पास ही चौके में एक दादी अपने पोते को खाना खिला रही थी। दादी ने उस रोज खिचड़ी बनाई थी। खिचड़ी गरम थी। दादी ने खिचड़ी के बीच में छेद करके घी डाल दिया था और घड़े से पानी भरने चली गई थी। थोड़ी ही देर के बाद बच्चा जोर से चिल्ला रहा था और कह रहा था, 'जल गया, जल गया।' दादी ने आकर देखा तो पाया कि बच्चे ने गरमागरम खिचड़ी के बीच में अपनी उँगलियाँ डाल दी थीं।

दादी बोली, "तू चाणक्य की तरह मूर्ख है। अरे, गरम खिचड़ी का स्वाद लेना हो तो उसे पहले कोनों से खाया जाता है और तूने मूर्खों की तरह बीच में ही हाथ डाल दिया और अब रो रहा है।"

चाणक्य बाहर निकल आए और बुढ़िया के पाँव छुए तथा बोले, "आप सही कहती हैं कि मैं मूर्ख ही

था, तभी राज्य की राजधानी पर आक्रमण कर दिया और आज हम सबको जान के लाले पड़े हुए हैं।"

चाणक्य ने उसके बाद मगध को चारों तरफ से धीरे-धीरे कमजोर करना शुरू किया और एक दिन चंद्रगुप्त मौर्य को मगध का शासक बनाने में सफल हुए।

खुद को सुधारो

चाणक्य एक जंगल में झोंपड़ी बनाकर रहते थे। वहाँ अनेक लोग उनसे परामर्श और ज्ञान प्राप्त करने के लिए आते थे। जिस जंगल में वे रहते थे, वह पत्थरों और कँटीली झाड़ियों से भरा था। चूँकि उस समय प्रायः नंगे पैर रहने का ही चलन था, इसलिए उनके निवास तक पहुँचने में लोगों को अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता था। वहाँ पहुँचते-पहुँचते लोगों के पाँव लहूलुहान हो जाते थे।

एक दिन कुछ लोग उस मार्ग से बेहद परेशानियों का सामना कर चाणक्य तक पहुँचे। एक व्यक्ति उनसे निवेदन करते हुए बोला, "आपके पास पहुँचने में हम लोगों को बहुत कष्ट हुआ। आप महाराज से कहकर यहाँ की जमीन को चमड़े से ढकवाने की व्यवस्था करा दें। इससे लोगों को आराम होगा।"

उसकी बात सुनकर चाणक्य मुसकराते हुए बोले, "महाशय, केवल यहीं चमड़ा बिछाने से समस्या हल नहीं होगी। कँटीले व पथरीले पथ तो इस विश्व में अनगिनत हैं। ऐसे में पूरे विश्व में चमड़ा बिछवाना तो असंभव है। हाँ, यदि आप लोग चमड़े द्वारा अपने पैरों को सुरक्षित कर लें तो अवश्य ही पथरीले पथ व कँटीली झाड़ियों के प्रकोप से बच सकते हैं।"

वह व्यक्ति सिर झुकाकर बोला, "हाँ गुरुजी, मैं अब ऐसा ही करूँगा।"

इसके बाद चाणक्य बोले, "देखो, मेरी इस बात के पीछे भी गहरा अर्थ छिपा है। दूसरों को सुधारने के बजाय खुद को सुधारो। इससे तुम अपने कार्य में विजय अवश्य हासिल कर लोगे। दुनिया को नसीहत देनेवाला कुछ नहीं कर पाता, जबकि उसका स्वयं पालन करनेवाला कामयाबी की बुलंदियों तक पहुँच जाता है।"

राष्ट्रधर्म

सम्राट् चंद्रगुप्त अपने मंत्रियों के साथ एक विशेष मंत्रणा में व्यस्त थे कि प्रहरी ने सूचित किया कि आचार्य चाणक्य राजभवन में पधार रहे हैं। सम्राट् चकित रह गए। इस असमय में गुरु का आगमन! वे घबरा भी गए। अभी वे कुछ सोचते ही कि लंबे-लंबे डग भरते हुए चाणक्य ने सभा में प्रवेश किया।

सम्राट् चंद्रगुप्त सहित सभी सभासद सम्मान में उठ गए। सम्राट् ने गुरुदेव को सिंहासन पर आसीन होने को कहा। आचार्य चाणक्य बोले, "भावुक न बनो, सम्राट्। अभी तुम्हारे समक्ष तुम्हारा

गुरु नहीं, तुम्हारे राज्य का एक याचक खड़ा है। मुझे कुछ याचना करनी है।"

चंद्रगुप्त की आँखें डबडबा आईं। बोले, "आप आज्ञा दें, समस्त राजपाट आपके चरणों में डाल दूँ।"

चाणक्य ने कहा, "मैंने आपसे कहा, भावना में न बहें, मेरी याचना सुनें।"

गुरुदेव की मुखमुद्रा देख सम्राट् चंद्रगुप्त गंभीर हो गए। बोले, "आज्ञा दें।"

चाणक्य ने कहा, "आज्ञा नहीं, याचना है कि मैं किसी निकटस्थ सघन वन में साधना करना चाहता हूँ। दो माह के लिए राजकार्य से मुक्त कर दें। और यह स्मरण रहे, वन में अनावश्यक मुझसे कोई मिलने न आए, आप भी नहीं। मेरा उचित प्रबंध करवा दें।"

चंद्रगुप्त ने कहा, "सबकुछ स्वीकार है।"

दूसरे दिन प्रबंध कर दिया गया। चाणक्य वन चले गए। अभी उन्हें वन गए एक सप्ताह भी नहीं बीता था कि यूनान से सेल्युकस (सिकंदर का सेनापति) अपने जामाता चंद्रगुप्त से मिलने भारत पधारे। उनकी पुत्री हेलेना का विवाह चंद्रगुप्त से हुआ था। दो-चार दिन बाद उन्होंने आचार्य चाणक्य से मिलने की इच्छा प्रकट कर दी। सेल्युकस ने कहा, सम्राट्, आप वन में अपने गुप्तचर भेज दें। उन्हें मेरे बारे में कहें। वे मेरा बड़ा आदर करते हैं। वे कभी इनकार नहीं करेंगे।"

अपने श्वसुर की बात मान चंद्रगुप्त ने वैसा ही किया। गुप्तचर भेज दिए गए। चाणक्य ने उत्तर दिया, "ससम्मान सेल्युकस वन लाए जाएँ। मुझे उनसे मिलकर प्रसन्नता होगी।"

सेना के संरक्षण में सेल्युकस वन पहुँचे। औपचारिक अभिवादन के बाद चाणक्य ने पूछा, "मार्ग में कोई कष्ट तो नहीं हुआ?"

इस पर सेल्युकस ने कहा, "भला आपके रहते मुझे कष्ट होगा! आपने मेरा बहुत खयाल रखा।"

न जाने इस उत्तर का चाणक्य पर क्या प्रभाव पड़ा कि वे बोल उठे, "हाँ, सचमुच आपका मैंने बहुत खयाल रखा।"

इतना कहने के बाद चाणक्य ने सेल्युकस के भारत की भूमि पर कदम रखने के बाद से वन आने तक की सारी घटनाएँ सुना दीं।

उसे इतना तक बताया कि सेल्युकस ने सम्राट् से क्या बात की। एकांत में अपनी पुत्री से क्या बातें हुईं। मार्ग में किस सैनिक से क्या पूछा।

सेल्युकस व्यथित हो गए। बोले, "इतना अविश्वास! मेरी गुप्तचरी की गई। मेरा इतना अपमान!"

चाणक्य ने कहा, "न तो अपमान, न अविश्वास और न ही गुप्तचरी। अपमान की बात तो मैं सोच भी नहीं सकता। सम्राट् भी इन दो महीनों में शायद न मिल पाते। आप हमारे अतिथि हैं। रह गई बात सूचनाओं की, तो वह मेरा राष्ट्रधर्म है। आप कुछ भी हों, पर विदेशी हैं। अपनी मातृभूमि से

आपकी जितनी प्रतिबद्धता है, वह इस राष्ट्र से नहीं हो सकती। यह स्वाभाविक भी है। मैं तो सम्राज्ञी की भी प्रत्येक गतिविधि पर दृष्टि रखता हूँ। मेरे इस 'धर्म' को अन्यथा न लें। मेरी भावना समझें।"

सेल्युकस हैरान हो गए। वह चाणक्य के पैरों में गिर पड़े। उन्होंने कहा, "जिस देश में आप जैसे राष्ट्रभक्त हों, उस देश की ओर कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता।"

चाणक्य का सामाजिक दृष्टिकोण

चाणक्य का सपना था कि राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से भारत विश्व में अग्रणी बने। उनकी पुस्तक 'अर्थशास्त्र' में उनके सपनों के भारत के दर्शन किए जा सकते हैं। 'नीतिशास्त्र' एवं 'चाणक्य नीति' में उनकी विचारोत्तेजकता से प्रेरणा ली जा सकती है। उनके कुछ विचारों से उनके सामाजिक दृष्टिकोण को समझा जा सकता है-

- जनसामान्य की सुख-संपन्नता ही राजा की सुख-संपन्नता है। उनका कल्याण ही उसका कल्याण है। राजा को अपने निजी हित या कल्याण के बारे में कभी नहीं सोचना चाहिए, बल्कि अपना सुख अपनी प्रजा के सुख में खोजना चाहिए।
- राजा का गुप्त कार्य है निरंतर प्रजा के कल्याण के लिए संघर्षरत रहना। राज्य का प्रशासन सुचारु रखना उसका धर्म है। उसका सबसे बड़ा उपहार है सबसे समान व्यवहार करना।
- आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था श्रेष्ठ अर्थव्यवस्था है, जो विदेश व्यापार पर निर्भर नहीं होनी चाहिए।
- समतावादी समाज हो, जहाँ सबके लिए समान अवसर हों।
- चाणक्य के अनुसार, संसाधनों के विकास के लिए प्रभावी भू-व्यवस्था होनी आवश्यक है। राज्य के लिए यह आवश्यक है कि वह जमींदारों पर नजर रखें कि वे अधिक भूमि पर कब्जा न करें और भूमि का अनधिकृत इस्तेमाल न करें।
- राज्य को कृषि-विकास पर सतत नजर रखनी चाहिए। सरकारी मशीनरी को बीज बोने से लेकर फसल काटने तक की प्रक्रियाओं के उन्नयन की दिशा में कार्यरत रहना चाहिए।
- राज्य का कानून सबके लिए समान होना चाहिए।
- नागरिकों की सुरक्षा सरकार के लिए महत्त्वपूर्ण होनी चाहिए, क्योंकि वही उनकी एकमात्र रक्षक है, जो केवल उसकी उदासीनता के कारण ही असुरक्षित हो सकती है।

चाणक्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे, जो भौतिक आनंद से आत्मिक आनंद को अधिक महत्त्व देता हो। उनका कहना था कि आंतरिक शक्ति और चारित्रिक विकास के लिए आत्मिक विकास आवश्यक है। देश और समाज के आत्मिक विकास की तुलना में भौतिक आनंद और उपलब्धियाँ हमेशा द्वितीयक हैं।

2,300 वर्ष पहले लिखे गए चाणक्य के ये शब्द आज भी हमारा मार्गदर्शन करते हैं। अगर उनकी राजनीति के सिद्धांतों का थोड़ा भी पालन किया जाए तो कोई भी राष्ट्र महान्, अग्रदूत और

अनुकरणीय बन सकता है।

अपनी बात

चाणक्य ने जीवन भर जो कहा, वह इतिहास बन गया। उनके कथन नजीर बन गए। उनके कथन जितने प्रासंगिक उनके समय में थे, आज भी हैं। एक-एक कथन कठोर अनुभवों की कसौटी पर कसा खरे सोने जैसा है। इनका अनुपालन करें और अपेक्षित सकारात्मक परिणाम देखें।

विष्णुगुप्त चाणक्य अन्य बालकों से भिन्न एक असाधारण बालक थे। उनके पिता चणक एक शिक्षक थे। वे भी अपने पिता का अनुसरण करके शिक्षक बनना चाहते थे। उन्होंने तक्षशिला विश्वविद्यालय में राजनीति और अर्थशास्त्र की शिक्षा ग्रहण की। इसके पूर्व वेद, पुराण इत्यादि वैदिक साहित्य का अध्ययन उन्होंने बचपन में ही कर लिया था। उनका 'चाणक्य नीति' ग्रंथ वैदिक साहित्य का ही निचोड़ है।

अध्ययन के दौरान उनकी कुशाग्र बुद्धि और तार्किकता से उनके साथी तथा शिक्षक भी प्रभावित थे इसी कारण उन्हें 'कौटिल्य' भी कहा जाने लगा। अध्ययन पूरा करने के बाद तक्षशिला विश्वविद्यालय में ही चाणक्य अध्यापन करने लगे। राजनीति के विद्यार्थी होने के कारण वे आरंभ से ही देशी-विदेशी राजनीति पर पैनी नजर रखते थे। इसी दौर में उत्तर भारत पर अनेक विदेशी आक्रमणकारियों की गिद्ध दृष्टि पड़ी, जिनमें सेल्यूकस, सिकंदर आदि प्रमुख हैं। इधर चाणक्य के गृह राज्य एवं अड़ोस-पड़ोस के हालात भी ठीक नहीं थे। शासकों ने प्रजा पर अनावश्यक कर थोप रखे थे। जनता उनके बोझ तले दबी पड़ी थी। इन सब असामान्य परिस्थितियों ने चाणक्य को विचलित कर दिया। वे भारत को एकीकृत देखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने तक्षशिला में अध्यापन-कार्य छोड़ दिया और राष्ट्र-सेवा का व्रत लेकर पाटलिपुत्र आ गए।

पाटलिपुत्र में जब उनका सामना राजा घनानंद से हुआ तो उन्होंने स्पष्ट शब्दों में जनता के कष्ट और राजा की बुराइयों को सामने रखा। चापलूसी-पसंद राजा घनानंद को यह सब नागवार गुजरा। चाणक्य दिमाग से जितने तेज थे, शक्ल से उतने ही कुरूप। उनकी शक्ल भी घनानंद को पसंद नहीं आई और उसने उन्हें राजमहल से बाहर निकलवा दिया। तब चाणक्य ने नंद वंश का समूल नाश करने की शपथ ली, जिसे चंद्रगुप्त की सहायता से पूरा भी किया।

चाणक्य का जीवन कठोर धरातल पर अनेक विसंगतियों से जूझता हुआ आगे बढ़ता है। कुछ लोग सोच सकते हैं कि उनका जीवन-दर्शन प्रतिशोध लेने की प्रेरणा देता है लेकिन चाणक्य का प्रतिशोध निजी प्रतिशोध न होकर सार्वजनिक कल्याण के लिए था। उन्होंने जनता के दुःख-दर्द को देखा और स्वयं सहा था। उसी की याचना लेकर वे राजा से मिले थे। घनानंद चूँकि प्रजा का हितैषी नहीं था, इसलिए चाणक्य ने उसके नाश का प्रण किया।

चाणक्य ने चंद्रगुप्त और बाद में उनके पुत्र बिंदुसार के मंत्री एवं विशेष सलाहकार के रूप में काम किया। लेकिन दुःखद बात यह रही कि वे बिंदुसार के एक मंत्री सुबंधु के हाथों धोखे से मारे गए। लेकिन कहते हैं कि विचारों को कोई नहीं मार सकता। उनके विचार मानव युग के अवसान तक

हमारा पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे।

एक अनिवार्यतः पठनीय, अनुकरणीय और संग्रहणीय पुस्तक।

कृमहेश शर्मा

मैं चाणक्य बोल रहा हूँ

अगोचर

- पुष्प में गंध, तिलों में तेल, लकड़ी में अग्नि, दूध में घी तथा ईख में मिठास विद्यमान होती है लेकिन दिखाई नहीं देती।

अमृत

- विष से भी अमृत की प्राप्ति संभव हो तो निस्संकोच उसका सेवन कर लेना चाहिए।
- राहु के लिए अमृत भी मृत्यु का कारण बना, जबकि भगवान् शिव द्वारा ग्रहण किए जाने पर विष भी अमृत बन गया।

अज्ञान

- अज्ञान कष्ट-प्रदायक होता है तथा इसके कारण मनुष्य उपहास का पात्र बन जाता है।

अतिथि

- अतिथि का महत्त्व क्षणिक विराम में ही निहित है। निस्संकोच या निर्लज्ज होकर एक ही स्थान पर निवास करते रहना अतिथि के लिए अशोभनीय है।
- मनुष्य का यह कर्तव्य है कि घर आए अतिथि को योग्य आसन देकर आदरपूर्वक बैठाए, उसकी कुशलता पूछे और अपनी कुशलता बताए, फिर उसे यथोचित भोजन कराए।
- अतिथि जिस घर का आतिथ्य स्वीकार नहीं करता, वहाँ भोजन ग्रहण नहीं करता, न दान-दक्षिणा लेता है, शास्त्रें ने उस गृहस्थ का जीवन व्यर्थ कहा है।
- दूरस्थ स्थान से आए अतिथि, थके-हारे पथिक तथा आश्रय हेतु आए व्यक्ति ईश्वर के समान होते हैं।

अति

- अति अत्यंत हानिकारक है। अति सुंदर होने के कारण ही रावण द्वारा सीता का हरण हुआ। अहंकार और गर्व की अति ही महाविद्वान् रावण की मृत्यु का कारण बनी। दैत्यराज बलि की अति दानशीलता ने ही उसे सबकुछ गँवाकर पाताल जाने के लिए विवश कर दिया।
- अति-भक्ति चोर का लक्षण है।
- अति से सब जगह बचना चाहिए।
- ‘अति’ द्वारा मनुष्य का ‘अंत’ निश्चित है।

अन्न

जैसा स्वादिष्ट और रुचिकर भोज्य पदार्थ कोई दूसरा नहीं है।

अभाव

- बीजों के अभाव या कमी के कारण फसल भरपूर नहीं होती।
- सेनापति के अभाव में सेना युद्ध में विजयश्री कभी प्राप्त नहीं कर सकती।

अभ्यास

- अभ्यास के बिना विद्वान् भी शास्त्रें का यथोचित वर्णन नहीं कर पाता और लोगों के बीच उपहास का पात्र बन जाता है।
- जो विद्वान् निरंतर अभ्यास नहीं करता, उसके लिए शास्त्र भी विष के समान हो जाते हैं।
- आलस्य और अनभ्यास विद्वानों की बुद्धि को भी भ्रष्ट करके उनके ज्ञान का नाश कर देता है।
- केवल निरंतर अभ्यास द्वारा प्राप्त विद्या की रक्षा की जा सकती है।
- बूँद-बूँद से घड़ा भर जाता है, बूँद-बूँद के मिलने से नदी बन जाती है, पाई-पाई जोड़ने पर व्यक्ति धनवान बन जाता है। उसी प्रकार यदि निरंतर अभ्यास किया जाए तो मनुष्य के लिए कोई भी विद्या अप्राप्य नहीं रहती।

अहंकार

- मनुष्य को अपनी दानवीरता, तप, साहस, विज्ञान, विनम्रता और नीति-निपुणता पर कभी अहंकार नहीं करना चाहिए।
- जो मनुष्य अहंकार में डूब जाता है, वह अतिशीघ्र पापों में लिप्त होकर नष्ट हो जाता है।
- राजा और गुरु की निकटता से व्यक्ति अहंकारी होकर दोष-युक्त हो जाता है।

आचरण

- मनुष्य का आचरण ही लोगों को अपने समक्ष नतमस्तक करने के लिए पर्याप्त है। इससे शत्रुओं पर भी विजय पाई जा सकती है।
- गलत आचरण से सौंदर्य नष्ट हो जाता है।
- जिसके क्रोध से कोई भयभीत न हो और जिसके प्रसन्न होने से भी किसी को कोई लाभ नहीं होता, ऐसे मनुष्य का आचरण किसी को प्रभावित नहीं कर सकता।
- केवल आचरण ही मनुष्य को पशुओं से श्रेष्ठ सिद्ध करता है।
- राजा अधर्म-युक्त आचरण करके नष्ट हो जाता है।
- विवशता मनुष्य और उसके आचरण को पथभ्रष्ट होने से रोकती है।
- मनुष्य बिना अधिक परिश्रम किए केवल अच्छे आचरण और स्वभाव द्वारा ही विद्वान् व्यक्ति, सज्जन पुरुष और पिता को संतुष्ट कर सकता है।

- श्रेष्ठ आचरण एवं श्रेष्ठ गुणों के कारण साधारण मनुष्य श्रेष्ठता के शिखर की ओर अग्रसर होता है।

आत्मबल

आत्मबल सभी बलों में सबसे श्रेष्ठ बल होता है।

आत्मा/जीवात्मा

- मनुष्य-शरीर में आत्मा का वास होता है। उसे देखा नहीं जा सकता, लेकिन विवेक द्वारा अनुभव अवश्य किया जा सकता है।
- मनुष्य को विवेक द्वारा आत्मा को जाग्रत् करना चाहिए।
- यदि मनुष्य का मन पापों एवं अशुद्धियों से परिपूर्ण है तो अनेक तीर्थस्नान करने के बाद भी उसकी आत्मा शुद्ध नहीं हो सकती।
- कौआ, कबूतर, चिड़िया, तोता-ये सभी विभिन्न जाति और वर्ण के पक्षी होते हुए भी रात्रि-समय एक ही वृक्ष पर विश्राम करते हैं लेकिन प्रातः होते ही अपने-अपने मार्ग की ओर उड़ जाते हैं। जीवात्माएँ भी इसी प्रकार परिवार रूपी वृक्ष पर कुछ समय के लिए बसेरा करती हैं। तदनंतर नियत समय आने पर वृक्ष को छोड़कर उड़ जाती हैं। इसलिए उनके जाने पर दुखी या शोकातुर नहीं होना चाहिए।
- शरीर में स्थित आत्मा एक नदी है। यह नदी ईश्वर के शरीर से निकली है। धैर्य इसके किनारे हैं, करुणा इसकी लहरें हैं, पुण्य इसके तीर्थ हैं। जो मनुष्य सदा पुण्य कर्मों में लिप्त रहता है, वह इस नदी में स्नान करके पवित्र होता है।
- लोभ-रहित आत्मा को 'सदापवित्र' कहा गया है।
- आत्मा ही हमारा हितैषी और आत्मा ही हमारा शत्रु है।
- जो व्यक्ति अपनी आत्मा को जीत लेता है, वह आत्मा ही उसकी हितैषी बन जाती है।
- प्रायः बुरे या नीच कर्म के बाद मनुष्य की आत्मा जाग्रत् हो उठती है और उसे अपने किए पर पश्चात्ताप होने लगता है। लेकिन बुरे कर्म करने से पूर्व ही उसे अच्छे-बुरे का ज्ञान हो जाए तो वह बुरे कर्मों से सदा के लिए निवृत्त हो जाएगा।
- संसार ज्ञान के अथाह भंडार से परिपूर्ण है। जीवात्मा सहस्रों जन्म लेकर भी इस ज्ञान को पूरी तरह अर्जित नहीं कर सकती।

अपमान

- अपमान मृत्यु से भी अधिक पीड़ादायक और अहितकारी है।
- अपनी मर्यादा के विपरीत कर्म करके ये दो प्रकार के लोग संसार में अपमान के भागी बनते हैं-एक, कर्महीन गृहस्थ और दूसरे सांसारिक मोह-माया में फँसे संन्यासी।
- अग्निए सर्पए सिंह तथा अपने कुल में जनमे व्यक्तियों का कभी अनादर नहीं करना चाहिए।
- अपमानित व्यक्ति क्षण-प्रतिक्षण अपमान का कड़वा घूँट पीता है समाज उसे घृणा की दृष्टि से देखता है सगे-संबंधी एवं मित्र आदि उसके साथ नीच व्यवहार करते हैं। यहाँ तक कि उसकी पत्नी एवं पुत्र आदि भी उससे कतराने लगते हैं।

आडंबर

- विषैला न होने पर भी जिस प्रकार सर्प के उठे हुए फन को देखकर लोग भयभीत हो जाते हैं, उसी प्रकार प्रभावहीन व्यक्ति को भी आडंबर द्वारा समाज में अपना प्रभाव बनाकर रखना चाहिए।
- आडंबर-युक्त प्रभाव से भी लोग भयभीत रहते हैं।

आश्रय

- उद्देश्य की प्राप्ति हेतु लिया गया आश्रय उद्देश्य के पूर्ण हो जाने के बाद अतिशीघ्र छोड़कर चले जाना चाहिए।
- किसी दूसरे पर आश्रित होकर जीना सबसे अधिक कष्टदायक होता है।

इंद्रियाँ

- इंद्रियों को अपने इच्छित कार्यों से सर्वथा दूर रखना तो मृत्यु को जीतने से भी कठिन है, लेकिन उन्हें बेलगाम छोड़ दिया जाए तो वे शीलवान देवगण को भी नष्ट कर देती हैं।
- इंद्रियों को वश में न रखने से हानि होती है।
- इंद्रियाँ यदि वश में न हों तो वे विषय-भोगों में लिप्त हो जाती हैं। उससे मनुष्य उसी प्रकार तुच्छ हो जाता है जैसे सूर्य के आगे सभी ग्रह।
- जो व्यक्ति इंद्रियों को जीतने के बजाय स्वयं उनका गुलाम बन जाता है, उसकी मुसीबतें शुक्ल पक्ष के चंद्रमा की तरह बढ़ती जाती हैं।
- जो राजा अपनी इंद्रियों और मन को जीते बिना अपने मंत्रियों को जीतना चाहता है तथा मंत्रियों को जीते बिना अपने शत्रुओं को जीतना चाहता है, उसका नष्ट होना अवश्यंभावी है।
- इंद्रियों पर नियंत्रण करके मनुष्य जिन-जिन बुराइयों को छोड़ना चाहता है, वे छूटती जाती हैं और सारी बुराइयों से मुक्ति के बाद उसके कष्ट भी समाप्त हो जाते हैं।
- जो पुरुष सबका भला चाहता है, वह किसी को कष्ट में नहीं देखना चाहता। जो सदा सच बोलता है, जो मन का कोमल है और जितेंद्रिय भी, उसे उत्तम पुरुष कहा जाता है।
- जैसे बेकाबू और अप्रशिक्षित घोड़े मूर्ख सारथि को मार्ग में ही गिराकर मार डालते हैं वैसे ही यदि इंद्रियों को वश में न किया जाए तो वे मनुष्य की जान की दुश्मन बन जाती हैं।
- अज्ञानी लोग इंद्रिय-सुख को ही श्रेष्ठ समझकर आनंदित होते हैं। इस प्रकार के लोग अनर्थ को अर्थ और अर्थ को अनर्थ कर देते हैं तथा अनायास ही नाश के मार्ग पर चल पड़ते हैं।
- जो व्यक्ति अपनी बेलगाम पाँचों इंद्रियों को गलत मार्ग पर चलने से नहीं रोकता, उसका नाश अवश्यंभावी है।
- जो व्यक्ति मन में घर बनाकर रहनेवाले काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद (अहंकार) और मात्सर्य (ईर्ष्या) नामक छह शत्रुओं को जीत लेता है, वह जितेंद्रिय हो जाता है।

ईश्वर-भक्ति

- ईश्वर मनुष्य के हृदय में वास करता है और मनुष्य इन्हीं भावों द्वारा निर्जीव वस्तुओं में

ईश्वर की कल्पना कर सिद्धियाँ प्राप्त करता है।
- ईश्वर जिसकी रक्षा करना चाहते हैं, उसे बुद्धि दे देते हैं, डंडा लेकर उसके पीछे पहरा नहीं देते।
- लकड़ी, पत्थर, धातु आदि से निर्मित देव-प्रतिमाओं को साक्षात् देव मानकर पूजने पर ही ईश-कृपा प्राप्त होती है।
- ईश्वर बेजान वस्तुओं में नहीं, भावना में वास करते हैं।
- मनुष्य ईश्वर को प्रसन्न करके तभी उनसे वरदान प्राप्त कर सकता है, जब वह स्वयं अपने हाथों से उनकी सेवा करे।
- कलियुग में जब संपूर्ण पृथ्वी पापियों, अधर्मियों और अत्याचारियों से भर जाएगी, तब भगवान् पृथ्वी का त्याग कर देंगे।
- ईश्वर-भक्ति में डूबे रहनेवाले व्यक्ति पाप-रहित होते हैं।

ईर्ष्या

ईर्ष्यालु लोगों को अपनी भलाई की बात भी कड़वी लगती है।

उद्देश्य

- जो मनुष्य उद्देश्य-रहित होकर जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उन्हें न तो घर में शांति मिल सकती है और न ही वन में। ऐसे मनुष्यों का जीवन बोझ के समान है, जिनसे किसी को लाभ नहीं होता।
- प्रत्येक कार्य बहुत सोच-विचार करके और उद्देश्य निश्चित करके करना चाहिए।
- मनुष्य को चाहिए कि पहले कार्य का उद्देश्य तय करे, उसके परिणाम का आकलन करे, उससे अपनी उन्नति का विचार करे, फिर उसे आरंभ करे।
- जीवन में उद्देश्य का होना अत्यंत आवश्यक है।
- जो मनुष्य जीवन का उद्देश्य निर्धारित कर लेते हैं, उनके जीवन में कभी भटकाव नहीं आता।

औषधि

- अपच की शिकायत में जल औषधि का कार्य करता है, अतः भरपूर जल का सेवन करें।
- औषधियों में अमृत सबसे श्रेष्ठ है।
- भलीभाँति उपयोग न किया जाए तो प्राण-प्रदायक औषधियाँ प्राणों का हरण भी कर लेती हैं।

काम

- काम मनुष्य का सबसे प्रबल शत्रु है।

- जो व्यक्ति काम के वशीभूत होकर नेत्रहीन हो जाता है, वह देखने की शक्ति गँवा बैठता है।
- काम, क्रोध और लोभ—आत्मा को भ्रष्ट कर देनेवाले नरक के तीन द्वार कहे गए हैं।
- वृद्धावस्था खूबसूरती को नष्ट कर देती है, निराशा धैर्य को, मृत्यु प्राणों को, निंदा धर्मपूर्ण व्यवहार को, क्रोध आर्थिक उन्नति को, दुर्जनों की सेवा सज्जनता को, काम-भाव लाज-शर्म को तथा अहंकार सबकुछ नष्ट कर देता है।
- काम और क्रोध मिलकर विवेकशील ज्ञान को नष्ट कर देते हैं।
- कामांध व्यक्ति पवित्रता के अर्थ और महत्त्व से अनभिज्ञ होता है।

कर्तव्य

- वह ज्ञान बेकार है, जिससे कर्तव्य का बोध न हो।
- वह कर्तव्य बेकार है, जिसकी कोई सार्थकता न हो।

कर्म/कर्मफल

- मनुष्य जीवन में वही कर्म करता और भोगता है, जो वह लिखवाकर लाया है।
- आय से अधिक व्यय करना, बिना बात के दूसरों से लड़ना-झगड़ना तथा व्यभिचार—ये तीन कर्म मनुष्य और उसके कुल को विनाश की ओर धकेलते हैं।
- उद्देश्य-रहित दीर्घकालिक जीवन की अपेक्षा शुभ कर्मों से युक्त अल्पकालिक जीवन अधिक श्रेष्ठ है।
- जब तक पृथ्वी पर मनुष्य के सत्कर्मों का गुणगान होता है, तब तक वह स्वर्ग में भी पूजा जाता है।
- सत्कर्मों से युक्त अल्पकालिक जीवन भी परम सुखदायक होता है।
- प्रत्येक मनुष्य को अपने कर्मों का फल स्वयं ही भोगना पड़ता है।
- कर्म ही मनुष्य को माया के बंधनों में जकड़े रहते हैं।
- मनुष्य का कार्य केवल कर्म करना है, लेकिन कर्मों के अनुसार उसका फल ईश्वर ही प्रदान करता है।
- इच्छाओं का पूर्ण होना या न होना मनुष्य के भाग्य और कर्मों पर निर्भर करता है।
- मनुष्य जो कर्म करता है, उसका भाग्य उसी के अनुरूप उसे फल प्रदान करता है।
- बुरे कर्म करके सुखों की कामना करना व्यर्थ है।
- बछड़ा सहस्रों गौओं के बीच भी जैसे अपनी माता को पहचान लेता है, उसी प्रकार कर्म भी अपने कर्ता को ढूँढ़ लेते हैं।
- मनुष्य का कर्मफल उसके कर्मों के साथ ही बँधा होता है।
- मनुष्य जैसा कर्म करता है, उसी के अनुरूप उसे अच्छे या बुरे फल की प्राप्ति होती है।
- मनुष्य-जीवन में आनेवाले दुःख, शोक, चिंताएँ, बंधन तथा संकट पाप-कर्मों के ही फल हैं।
- दुःख व क्लेश-रहित सुखमय जीवन सत्कर्मों से प्राप्त होता है।

काल/समय

- संसार में केवल काल अर्थात् समय ही सबसे शक्तिशाली है।
- काल का चक्र निरंतर गतिशील रहता है। इसके समक्ष बड़े-से-बड़ा ज्ञानी, विद्वान् और पुण्यात्मा भी असहाय हो जाता है। वीर और निर्भय क्षत्रिय भी परास्त हो जाता है।
- मनुष्य-जीवन की चारों अवस्थाएँ काल के अनुरूप ही कार्य करती हैं।
- काल को जीतना असंभव है।
- बीता हुआ समय लौटकर नहीं आता। उसमें घटित घटनाओं को बदला नहीं जा सकता। इसलिए उसे बार-बार याद करने से कोई लाभ नहीं होता।
- भविष्य में क्या घटित होने वाला है, मनुष्य इससे पूर्णतः अनभिज्ञ होता है। इसलिए उसका चिंतन व्यर्थ है।
- मनुष्य को केवल अपने वर्तमान पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। यदि वह वर्तमान को सुधार लेगा तो उसका भविष्य अपने आप ही उज्ज्वल हो जाएगा।
- विधि का विधान कोई बदल नहीं सकता।
- समय को देखे बिना कार्य करनेवाले सदैव असफलता का मुख देखते हैं।

कुल

- नीच कुल में जनमा विद्वान् एवं गुणों से युक्त व्यक्ति भी समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त करता है।
- कुल की शोभा सदाचार में निहित होती है।
- व्यक्ति के आचरण पर ही कुल की श्रेष्ठता निर्भर करती है।
- जो मनुष्य मान-मर्यादा का पालन करता है, धर्मनिष्ठ है, अपनी सज्जनता नहीं त्यागता, वह चाहे उत्तम कुल में पैदा हुआ हो या नीच कुल में, हजारों कुलीनों से श्रेष्ठ होता है।
- पथभ्रष्ट होने से कुल कलंकित हो जाता है।
- विद्वत्ता एवं गुणों के अभाव में उच्च कुल में जनमा व्यक्ति भी तिरस्कार का भागी बन जाता है।
- महान् बनने के लिए मनुष्य का उच्च कुल में जन्म लेना ही पर्याप्त नहीं है। इसके लिए उसका सहनशील, संतोषी, विद्वान् एवं परोपकारी होना भी आवश्यक है।

कौआ

- भवन की छत पर बैठने से कौआ गरुड़ नहीं हो जाता।
- कौआ यह नहीं जानता कि उसे क्या खाना चाहिए और क्या नहीं।

क्रोध

- नेत्रें से क्रोध का ज्ञान होता है।
- क्रोध भयंकर अग्नि के समान है, जो अपनी लपटों से मनुष्य को बार-बार प्रताड़ित करता है।

- निर्धनता एवं अक्षमता के बावजूद धन-संपत्ति की इच्छा तथा अक्षम एवं असमर्थ होने के बावजूद क्रोध करना—ये दोनों अवगुण शरीर में काँटों की तरह चुभकर उसे सुखाकर रख देते हैं।
- क्रोध एक तीक्ष्ण विष है, जो कड़वा, सिरदर्द पैदा करनेवाला, पापी, क्रूर और प्रकृति में गरम है। दुष्ट प्रकृति के लोग इसे नहीं पी सकते, सज्जन पी जाते हैं।
- मनुष्य को क्रोध से बचते हुए शांतिपूर्वक समस्त कष्टों को सहना चाहिए।
- क्रोध व्यक्ति का पूर्णतः सर्वनाश कर डालता है।
- क्रोध साक्षात् यम का स्वरूप है, जो अपने विकराल मुख से व्यक्ति को ग्रसने के लिए सदा तत्पर रहता है।
- क्रोध के अधीन होकर व्यक्ति बुद्धि-विवेक खो बैठता है और नीच कर्म कर डालता है।

क्षमा

- क्षमाशीलता में ही तपस्वियों की शोभा निहित है।
- क्षमा से क्रोध को शांत किया जा सकता है।

क्षत्रिय

क्षत्रिय तलवार की धार पर चलकर स्वयं को सम्मानित और गौरवान्वित अनुभव करता है।

गाय

- गायें गंध से देखती हैं, ज्ञानी लोग वेदों से, राजा गुप्तचरों से तथा जनसामान्य नेत्रें से देखते हैं।
- जो गाय कठिनाई से दूध देती है, उसे बहुत कष्ट उठाने पड़ते हैं। जो गाय सरलता से दूध देती है, उसे कोई कष्ट नहीं होता।
- जो बाँझ गाय दूध नहीं देती, उसे घर में रखने का लाभ नहीं है।

गायत्री मंत्र

- मंत्रें में गायत्री मंत्र सर्वश्रेष्ठ और समस्त कामनाओं को पूर्ण करनेवाला है।

गुण/अवगुण

- स्वाभाविक गुण-दोष प्रत्येक प्राणी की व्यक्तिगत उपलब्धि होते हैं। ये प्राणी के अंदर जन्म के साथ प्रकट होते हैं इन्हें कहीं भी बाहर से ग्रहण नहीं करना पड़ता।
- बुद्धि, उत्तम कुल, जितेंद्रियता, ज्ञान, संयमित वाणी, पराक्रम, यथाशक्ति दान और कृतज्ञता—ये आठ गुण व्यक्ति की शोभा बढ़ाते हैं।
- यज्ञ, दान, अध्ययन तथा तपश्चर्या—ये चार गुण सज्जनों के साथ रहते हैं और इंद्रिय-दमन, सत्य, सरलता तथा कोमलता— इन चार गुणों का सज्जन पुरुष अनुसरण करते हैं।
- अच्छाई में बुराई देखना मृत्यु जैसा कष्टकारी अवगुण है।
- कुल में उत्पन्न एक गुणवान् पुत्र ही संपूर्ण कुल का उद्धार कर देता है।
- घोर अहंकार, वाचालता, भोग प्रवृत्ति, क्रोध, स्वउदर-पोषण और मित्र से घात—ये छह अवगुण मनुष्य की आयु को क्षीण करते हैं।
- धन और स्वास्थ्य मनुष्य के दो सबसे बड़े गुण हैं।
- अवगुणी पुत्र अपने कर्मों द्वारा संपूर्ण कुल को कलंकित कर देता है।
- केवल गुण ही प्रेम होने का कारण है, बल-प्रयोग नहीं।
- मनुष्य अपने आस-पास के प्राणियों से कुछ-न-कुछ अवश्य सीख सकता है। राजपुत्रें से नम्रता और विनयशीलता, विद्वानों से स्नेहयुक्त मधुर वचन बोलने की कला, जुआरियों से मिथ्या भाषण की कला तथा स्त्रियों से छल-कपट का गुण ग्रहण करना चाहिए।
- संसार में उन्नति के अभिलाषी व्यक्तियों को नींद, तंद्रा (ऊँघ), भय, क्रोध, आलस्य तथा देर से काम करने की आदत—इन छह दुर्गुणों को सदा के लिए त्याग देना चाहिए।
- जल्दबाजी, बात पर ध्यान न देना तथा आत्मप्रशंसा-ये तीन अवगुण ज्ञान के शत्रु हैं।
- व्यक्ति को कभी भी सच्चाई, दानशीलता, निरालस्य, द्वेषहीनता, क्षमाशीलता और धैर्य—

इन छह गुणों का त्याग नहीं करना चाहिए ।

- बुद्धि, उच्च कुल, इंद्रियों पर काबू, शास्त्र-ज्ञान, पराक्रम, कम बोलना, यथाशक्ति दान देना तथा कृतज्ञता—ये आठ गुण मनुष्य की ख्याति बढ़ाते हैं।
- आयु के स्थान पर मनुष्य को गुण-अवगुण के आधार पर परखना चाहिए।
- गुणवान व्यक्ति का विवेकशील होना आवश्यक है।
- जब तक गुणी एवं विवेकी व्यक्ति को यथोचित स्थान प्राप्त नहीं होता, तब तक वह मूल्यहीन एवं तिरस्कृत रहता है।
- सच्चाई, खूबसूरती, शास्त्रज्ञान, उत्तम कुल, शील, पराक्रम, धन, शौर्य, विनय और वाक्पटुता—ये गुण समस्त ऐश्वर्य पाने के साधन हैं।
- उचित स्थान प्राप्त करने के बाद ही किसी गुणी व्यक्ति के गुणों को समाज द्वारा स्वीकारा जाता है।
- विद्वान् व्यक्ति का एक छोटा सा अवगुण उसके लिए अभिशाप बन जाता है।
- कभी-कभी अनेक अवगुणों पर एक गुण भी बहुत भारी पड़ जाता है।
- एक चंद्रमा रात के समस्त अंधकार को हर लेता है। यह कार्य सहस्रों तारे भी एक साथ मिलकर नहीं कर सकते।
- अनेक अवगुणी पुत्र उत्पन्न करने की अपेक्षा एक गुणी को उत्पन्न करना सर्वथा उपयुक्त है।
- उद्दंड एवं अवगुणी पुत्र कुल को शोक एवं अपमान की ओर धकेलकर उसके विनाश का कारण बनते हैं।
- दुर्जन व्यक्ति कितना भी भला-बुरा कह ले, कितनी भी निंदा या अपमान कर ले, लेकिन गुणी व्यक्ति के गुण यथावत् बने रहते हैं, उनका महत्त्व कम नहीं होता।
- एक गुणी पुत्र अपने ज्ञान, विवेक और विद्वत्ता द्वारा कुल को समाज में गौरव प्रदान करता है।
- रावण के सहस्रों पुत्र एवं नाती थे, लेकिन अवगुणी होने के कारण वे सभी युद्ध में मारे गए।
- मनुष्य अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ के भोग-विलासों में नष्ट नहीं करें। अच्छे गुणों को ग्रहण कर पुण्य प्राप्त करें।
- मूर्ख या पशुओं से प्राप्त होनेवाले गुणों को भी ग्रहण करने में किसी प्रकार का संकोच या लज्जा अनुभव नहीं होनी चाहिए।
- मनुष्य को सिंह और बगुले से एक-एक, गधे से तीन, मुर्गे से चार, कौए से पाँच तथा कुत्ते से छह गुण ग्रहण करने चाहिए।
- समय पर जागना, युद्ध के लिए सदैव तत्पर रहना, बंधु-बांधवों को उनका उचित हिस्सा देना तथा मैथुन द्वारा पत्नी को संतुष्ट करना—मुर्गे से ये चार गुण ग्रहण करने चाहिए।
- छिपकर मैथुन करना, दुष्टता एवं ढिठाई, संग्रह की प्रवृत्ति, आलस्य न करना तथा कभी किसी पर विश्वास न करना— ये पाँच गुण कौए से ग्रहण करने चाहिए।
- चंदन के वृक्षों से घिरे होने के बाद भी बाँस उनके समान सुगंधित नहीं होते। उनमें चंदन-वृक्ष के गुण उत्पन्न नहीं होते।
- अधिक खाने की शक्ति रखना, अभाव की स्थिति में थोड़े से ही संतोष करना, गहरी नींद

में सोना, सोते समय भी सजग रहना, स्वामीभक्ति तथा वीरतापूर्वक शत्रुओं का सामना करना— ये छह गुण कुत्ते से ग्रहण करने चाहिए।
- बिना थके परिश्रम करते रहना, सर्दी-गरमी की चिंता न करना तथा धैर्य एवं संतोष—ये गुण गधे से ग्रहण करने चाहिए।
- ईख, तिल, क्षुद्र स्त्री, स्वर्ण, धरती, चंदन, दही और पान का जितना भी मर्दन किया जाए उनके गुणों में उतनी ही वृद्धि होती है।
- जिसकी माता स्वयं लक्ष्मी हों, पिता भगवान् विष्णु हों तथा भक्तजन उसके सगे-संबंधियों की श्रेणी में आते हों, ऐसा व्यक्ति संसार में श्रेष्ठ होता है। उसके लिए तीनों लोक ही अपने देश के समान हो जाते हैं—अर्थात् वह तीनों लोकों का स्वामी हो जाता है। लेकिन ऐसी स्थिति प्राप्त करने के लिए मनुष्य में सज्जनता, परोपकार, सहनशीलता तथा दानवीरता के गुण होने चाहिए।
- केवल एक गुण के कारण ही अवगुणी होते हुए भी मनुष्य समाज में मान-सम्मान प्राप्त कर लेता है।
- भले ही मनुष्य दुर्जनों की संगति करता हो, भयानक एवं कुरूप हो या नीच कुल में जनमा हो, लेकिन यदि उसमें बुद्धि-विवेक का गुण है तो वह अवगुणों से युक्त होते हुए भी विद्वानों की सभा में सम्मानित होता है।

गुरु

- जो व्यक्ति विद्वान् न हो, उसे गुरु न मानें।
- ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के लिए अग्नि ही गुरु के समान है।
- स्त्रियों के लिए उनके पति गुरु हैं।
- गुरु के आदेश का यथोचित पालन न करने पर अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं।
- गुरु की कृपा से ही मनुष्य मोह-माया के चक्र को भेदकर ब्रह्म-दर्शन के योग्य बनता है।
- ईश्वर और भक्त के बीच में गुरु सेतु का कार्य करता है।
- गुरु की सेवा द्वारा विद्या प्राप्त होती है।
- गुरु का ऋण संसार की बहुमूल्य वस्तु देकर भी नहीं चुकाया जा सकता।
- मनुष्य को ब्रह्म-शक्ति, आत्मा-परमात्मा के गूढ़ रहस्य और तत्त्वज्ञान का बोध गुरु द्वारा ही होता है।
- गुरु बिना ज्ञान संभव नहीं है।
- गुरु को त्यागनेवाला मनुष्य उस अनाचारी स्त्री की तरह होता है, जिसे समाज में तिरस्कृत किया जाता है।
- जो मनुष्य गुरु का आश्रय छोड़कर विद्यार्जन हेतु इधर-उधर भटकता है, यदि वह कहीं से ज्ञान अर्जित कर ले तो भी विद्वानों की सभा में उपहास का पात्र बनता है।

गोपनीयता

- जब तक कार्य-योजना पूरी तरह से सफल न हो जाए, तब तक उसका उल्लेख किसी से न

करें।

चरित्र

- चरित्र की यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए। धन तो आता-जाता रहता है। धन के नष्ट होने पर भी चरित्र सुरक्षित रहता है, लेकिन चरित्र नष्ट होने पर सबकुछ नष्ट हो जाता है।

जड़

- संपूर्ण वृक्ष जड़ पर टिका होता है। यदि जड़ नष्ट या कमजोर हो जाए तो वृक्ष को सूखते समय नहीं लगता, इसलिए जड़ की यथासंभव रक्षा करनी चाहिए।

जागरूक

- जो व्यक्ति सावधान, सजग और जागरूक होगा, कोई उसका अहित नहीं कर सकता है।

तप

- संसार में शांति से बढ़कर कोई तप नहीं है।
- तप द्वारा मनुष्य को ऊँचा पद मिलता है।

ताकत

- दो समान ताकतें जब लड़ती हैं तो दोनों का ही नुकसान होता है।
- ताकत ही मैत्री कायम रखने का मुख्य घटक है।
- धन की ताकत से सेनाएँ जन्म लेती हैं।
- सेना के खजाने (ताकत) से धन रूपी पृथ्वी की रक्षा होती है।
- युद्ध जीत लेने के बावजूद धन और सैन्य ताकत के अभाव में राजा का राज्य नष्ट हो जाता है।
- कोई भी योजना आरंभ करने से पहले अपने खजाने की ताकत परख लें।

तृप्ति

- लकड़ियाँ आग को तृप्त नहीं कर सकतीं नदियाँ समुद्र को तृप्त नहीं कर सकतीं सभी प्राणियों की मृत्यु यम को तृप्त नहीं कर सकती। तृप्ति के पीछे भागना व्यर्थ है।

तृष्णा

- तृष्णा से बढ़कर कोई रोग नहीं है।

- तृष्णा रूपी रोग वास्तविक सुखों को भी खा जाता है।
- मनुष्य धन, आयु, स्त्री तथा भोजन-सामग्री से कभी संतुष्ट नहीं होता।
- मनुष्य अतृप्ति व असंतुष्टि के साथ जन्म लेता है और इन्हीं के साथ संसार से पलायन करता है।
- तृष्णा का कभी अंत नहीं होता। यह सदैव मनुष्य को अशांत और व्यथित करती है।

दया

- दूसरों पर दया करने से जिसका ह्रदय प्रसन्नता का अनुभव करता है, उसे ज्ञान एवं मोक्ष-प्राप्ति हेतु लंबी-लंबी जटाएँ धारण करने या भस्म लगाने की आवश्यकता नहीं है।
- सभी तीर्थस्थलों में स्नान करना तथा प्राणिमात्र के प्रति दया का भाव रखना—इन दोनों बातों का समान पुण्य मिलता है, लेकिन इनमें दयाभाव श्रेष्ठ है।
- सहस्र वर्षों तक कठिन तपस्या करके भी योगियों के लिए जो दुर्लभ है, वह ज्ञान एवं मोक्ष प्राणिमात्र पर दया करने से सहज ही प्राप्त हो जाता है।
- दया सभी धर्मों का मूलाधार है।

दंड

- जहाँ दंड नहीं होगा वहाँ 'मत्स्य-कानून' चलेगा-जैसे बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती है।
- दंड अनुशासन का मूल है, लोगों की समृद्धि का स्रोत है।
- दंड से विपत्तियाँ टलती हैं और सुरक्षा एवं कल्याण की स्थापना होती है।
- दंड को आँखें न दें। वह राजा और प्रजा में कोई अंतर न करे। सबको अपराध के अनुसार यथोचित सजा दे।
- राजा ऐसे दंड दे कि पुत्र और शत्रु में कोई भेद न रहे।
- दंड न देने पर निर्दोष दंड पाता है।
- राजा दंड से चलाता है, आग अपने ताप से, सूरज अपनी किरणों से और ब्राह्मण अपने तप से।
- दंड द्वारा लोगों को काबू में रखा जाता है। आत्मनियंत्रित लोग गिने-चुने हैं।
- आत्मसुरक्षा में सबकी सुरक्षा निहित है।
- अमानवीय दंड से राजा सबकी घृणा का पात्र बन जाता है।
- अपेक्षित दंड सावधानीपूर्वक देना चाहिए।
- उसी दंड का लाभ है, जिससे अपराधों पर लगाम लग सके।

दान

- दान ही दरिद्रता को नष्ट करने का सशक्त साधन है।
- दान ऐसे मनुष्य को दें, जो दरिद्र हो।

- जिस प्रकार समुद्र का जल ग्रहण कर मेघ उसे समृद्धिदायक वर्षा के रूप में खेतों पर बरसाते हैं और वही जल कई गुना होकर पुनः समुद्र में जा मिलता है, उसी प्रकार दान का वास्तविक अधिकारी वही व्यक्ति है जो सहनशीलता, विद्वत्ता, ईमानदारी, सज्जनता आदि गुणों से संपन्न हो।
- दान हर किसी को नहीं देना चाहिए।
- योग्य व्यक्ति को दिया गया दान सहस्र गुना होकर वापस मिलता है।
- जो व्यक्ति निर्धन होने पर भी दानशील हो, उसे स्वर्ग से भी ऊपर स्थान प्राप्त होता है।
- न्याय और मेहनत से कमाए धन के ये दो दुरुपयोग कहे गए हैं—एक, कुपात्र को दान देना और दूसरा, सुपात्र को जरूरत पड़ने पर भी दान न देना।
- जो व्यक्ति अमीर होने पर भी दानशील न हो और गरीब होने पर जिसमें कष्ट सहने की शक्ति न हो, उसका जीवन व्यर्थ है।
- कुपात्र को दिया गया दान महत्त्वहीन हो जाता है।
- दान कभी व्यर्थ नहीं जाता है। दस गुना अधिक होकर पुनः प्राप्त हो जाता है।
- मधुमक्खियों का संचित मधु भी दान के अभाव में नष्ट हो जाता है।
- अपनी विद्वत्ता को सार्थक बनाए रखने के लिए मनुष्य को यथासंभव दान करते रहना चाहिए। इससे लोक और परलोक में उसका भला होता है।
- हाथ की शोभा आभूषण या कंगन आदि धारण करने से नहीं, अपितु दान करने से बढ़ती है।

दीपक

- दिन के प्रकाश में दीपक जलाने की कोई उपयोगिता नहीं है।
- दीपक अंधकार का नाश कर देता है, तथापि उसके काजल से कालिमा भी उत्पन्न होती है।
- दीपक की एक छोटी सी लौ गहन अंधकार को चीर देती है।

दीर्घायु

- प्राणिमात्र के प्रति नरम व्यवहार, केवल गुण देखना, धीरज, क्षमाशीलता तथा मित्रें का आदर करना— विद्वानों के अनुसार, ये सभी सद्गुण दीर्घायु में सहायक हैं।

दुखी

- दुखी व्यक्ति से कभी सुख प्राप्त नहीं हो सकता, अतः उसकी संगति से बचें।

दुर्जन/दुराचारी

- दुराचारी, पापी, दुर्जन तथा दुष्ट स्वभाववाले व्यक्ति कोयले की खान के समान होते हैं, जहाँ हर कोई काला हो जाता है।
- सर्प केवल काल के बलवान होने पर काटता है, पर दुर्जन व्यक्ति कदम-कदम पर

विश्वासघात करता है।

- दुर्जनों की संगति के कारण निरपराधी भी उन्हीं के समान दंड पाते हैं जैसे सूखी लकड़ियों के साथ गीली लकड़ियाँ भी जल जाती हैं।
- दुष्ट लोग अकारण खुश होते हैं और अकारण रुष्ट।
- सरलता, पवित्रता, संतुष्टि, मीठे बोल, जितेंद्रियता, सच्चाई और दृढ़ता—ये गुण दुष्टों में नहीं होते।
- दुर्जन लोगों में आत्मज्ञान, सहनशक्ति, धर्म-परायणता, वचनबद्धता, दानशीलता, दुःखहीनता, रक्षा का भाव आदि जैसे सद्गुण नहीं होते।
- मनुष्यों में नाई, पक्षियों में कौआ, पशुओं में गीदड़ और स्त्रियों में मालिन सबसे धूर्त व मक्कार होते हैं।
- दुष्ट और दुर्जन व्यक्तियों को धन की महत्त्वाकांक्षा होती है। उसे प्राप्त करने के लिए वे नीच कार्य करने से भी पीछे नहीं हटते। धन-प्राप्ति ही उनका एकमात्र ध्येय होता है।
- सत्य, क्षमा, दया और अलोभ को दुर्जन लोग चाहकर भी नहीं अपना सकते। ये उनके लिए दुर्लभ हैं।
- दुर्जन व्यक्ति काँटों के समान होते हैं, इसलिए या तो उन्हें जूते से मसल दें या उन्हें देखकर अपना मार्ग बदल लें।
- दूसरों की उन्नति को देखकर ईर्ष्या करना दुर्जन व्यक्ति का जन्मजात स्वभाव होता है।
- किसी अवसर पर सज्जनों द्वारा पूजित होने पर दुष्ट और अत्याचारी लोग भी स्वयं को सज्जन समझने का भ्रम पाल लेते हैं।
- गुणहीन मनुष्य दुर्जन है।
- दुष्ट व्यक्ति गुप्त रहस्य छिपाकर नहीं रख सकता।
- बुरे कर्मों में लिप्त दुर्जन व्यक्ति अपने साथ-साथ अपने वंश को भी कलंकित करता है।
- दुर्जन व्यक्ति विषैले जीवों के समान होते हैं।
- सर्प का विष उसके दाँत में, मधुमक्खी का मस्तक में तथा बिच्छू का पूँछ में होता है जबकि दुर्जन व्यक्ति की संपूर्ण देह विष-युक्त होती है।
- दुर्जन व्यक्ति कितना भी वृद्ध हो जाए, उसमें दुष्टता और पाप विद्यमान रहते हैं।
- धीर पुरुष सरल, संयमी, विनयी और लज्जाशील होते हैं, जिन्हें दुर्जन लोग कमजोर मानकर तिरस्कृत करते हैं। दुर्जनों को इसकी बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है।
- जो व्यक्ति दानादि से विमुख रहते हैं, वेदों के श्रवण को महत्त्वहीन मानते हैं, जिनकी दृष्टि में संत-महात्माओं के दर्शन निरर्थक हैं, जिन्होंने कभी भी तीर्थयात्र का सुख नहीं भोगा, जिनके पेट पाप की कमाई से भरे हुए हैं, जिन्होंने अभिमान और अहंकार के आवरण से खुद को ढक रखा है, वे मनुष्य नीच, दुष्ट और स्वार्थी कहे जाते हैं।
- दुष्ट व्यक्ति की निकटता अत्यंत हानिकारक और संकटदायक होती है।
- संसार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है, जिसने दुर्जन व्यक्तियों के कारण संकटों का सामना न किया हो।
- सन्मार्ग की ओर अग्रसर करनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को दुर्जन अपना शत्रु मानते हैं।
- दुराचारियों से बचने के लिए देश का त्याग भी निस्संकोच कर देना चाहिए।

- हाथी को अंकुश, घोड़े को चाबुक तथा सींगवाले पशुओं को डंडे से जिस प्रकार वश में किया जाता है, उसी प्रकार दुर्जन को वश में करने के लिए तलवार का सहारा लेना पड़ता है।
- नीच या दुर्जन व्यक्ति की संगति से दूर रहना ही श्रेयस्कर है।
- दुर्जन व्यक्ति सहस्र चांडालों के समान है।
- दुर्जन व्यक्ति अत्यंत घातक, नीच और विश्वासघाती होता है। उसकी संगति मात्र से अनेक संकट एवं दुःख उत्पन्न हो जाते हैं।
- जो मनुष्य अत्यंत क्रोध करता है, जिसके मुख से सदा विष भरी बातों का प्रसार होता है, जो अपने बंधु-बांधवों का अहित करने के लिए सदैव तत्पर रहता है, जो दुष्ट व्यक्तियों की संगति करता है तथा जो नीच व्यक्ति की चाकरी करता है, वह व्यक्ति दुर्जन कहलाता है।
- शेर की गुफा में भी हाथी के मस्तक पर सुशोभित होनेवाली गजमुक्ता मणि मिल सकती है, लेकिन गीदड़ (दुर्जन) के आवास में केवल हड्डी या मांस के अतिरिक्त कुछ नहीं मिल सकता।
- दुष्ट एवं दुर्जन व्यक्ति का स्वभाव अत्यंत रहस्यमय होता है और परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है।
- दूध, घी और शक्कर से सींचने पर भी नीम अपना स्वभाव (कड़वापन) नहीं छोड़ता, उसी प्रकार अनेक उपदेश देने तथा अपनत्व दिखाने के बावजूद दुर्जन को सज्जन बनाना असंभव है।
- दुष्ट व्यक्तियों की संगति केवल अवगुण और दुराचार ही प्रदान करती है।
- जिस प्रकार बार-बार धोने पर भी मल त्यागनेवाली इंद्रिय शुद्ध नहीं होती, उसी प्रकार ज्ञानयुक्त अनेक उपदेश देने के बाद भी दुर्जन व्यक्ति के स्वभाव को बदला नहीं जा सकता।

दुश्मन

- जैसे जाल बिछाकर पंछी को फाँसा जाता है वैसे ही भरोसा जीतकर और जाल बिछाकर दुश्मन को बरबाद करना चाहिए।
- दुश्मन से दोस्त बने व्यक्ति पर कभी आँख मूँदकर भरोसा नहीं करना चाहिए।
- बुरे दोस्त पर भरोसा मत करो, यहाँ तक कि अच्छे दोस्त पर भी आँख मूँदकर भरोसा मत करो। कभी-कभी गुस्से में अच्छा दोस्त भी भरोसा तोड़ देता है।

दोष

- यदि बबूल का झाड़ वसंत ऋतु में भी पत्तों से रहित रहता है तो इसमें वसंत का कोई दोष नहीं होता।
- उल्लू को दिन में दिखाई नहीं देता तो इसमें सूर्य को दोष देना व्यर्थ है।
- दूसरे का धन छीनना, पर-स्त्री से संबंध रखना और सच्चे मित्र को त्याग देना—ये तीनों ही भयंकर दोष हैं, जो विनाशकारी हैं।
- यदि चातक के मुख में वर्षा की बूँदें नहीं गिरतीं तो इसमें मेघों का दोष नहीं है।

द्वेष

- शत्रुओं से द्वेष होने पर प्राणों के साथ-साथ धन की भी हानि होती है।
- राजा से द्वेष करने पर प्राण एवं धन सहित मान-सम्मान का भी नाश हो जाता है।
- जो व्यक्ति दूसरों की धन-संपत्ति, सौंदर्य, पराक्रम, उच्च कुल, सुख, सौभाग्य और सम्मान से ईर्ष्या व द्वेष करता है, वह असाध्य रोगी है। उसका यह रोग कभी ठीक नहीं होता।
- ब्राह्मण (विद्वान्) से द्वेष करने के परिणामस्वरूप मनुष्य का धन-प्राण-सम्मान जाता ही है, साथ में उसके संपूर्ण कुल का भी नाश हो जाता है।

धन

- विपत्ति काल के लिए मनुष्यों को धन का संचय अवश्य करना चाहिए_ लेकिन कभी यह न सोचें कि धन द्वारा वे विपत्ति को दूर करने में समर्थ हो जाएँगे।
- धन का संचय मनुष्य की बुद्धिमत्ता का परिचायक है।
- धन का अनुचित व्यय करने से वह नष्ट हो जाता है।
- अन्याय से कमाए गए धन से दोष नहीं छिपते, बल्कि कई और दोष उघड़ जाते हैं।
- धन का अत्यधिक संग्रह मनुष्य के मन-मस्तिष्क को भ्रष्ट तो करता ही है, उसे लोभी और स्वार्थी भी बना देता है।
- पुरुषार्थ द्वारा ईमानदारी से कमाया धन जीवनपर्यंत मनुष्य के साथ रहता है तथा उसमें निरंतर वृद्धि होती रहती है।
- पुस्तकों में वर्णित ज्ञान और दूसरों के पास गया धन आवश्यकता पड़ने पर कभी काम नहीं आता।
- संकट में केवल वही धन उपयोग में आता है, जो मनुष्य के पास संचित होता है।
- कष्ट से, अधर्म से तथा शत्रुओं की सेवा करके कमाए धन से अनादर व अपयश मिलता है।
- धन के उपयोग से धन की महत्ता बढ़ती है।
- धन आने पर पराए भी अपने बन जाते हैं। पत्नी, पुत्र, बंधु-बांधव भी स्नेह तथा अपनत्व दिखाने लगते हैं।
- जलाशय में रुके हुए जल को समयानुसार न बदला जाए तो उसमें सड़ाँध उत्पन्न हो जाती है और वह किसी उपयोग का नहीं रहता। उसे उपयोगी बनाने के लिए आवश्यक है कि उस जल को चलायमान रखा जाए। उसी प्रकार संचित धन को दान द्वारा रिक्त करते रहना चाहिए। इससे एक ओर मनुष्य जहाँ लोक में यश एवं मान-सम्मान प्राप्त करता है, वहीं दूसरी ओर परलोक में सुखों का मार्ग प्रशस्त कर लेता है।
- पाप-कर्म द्वारा अथवा किसी को कष्ट-क्लेश पहुँचाकर अर्जित किया धन अभिशापित होकर मनुष्य का नाश कर डालता है।
- पाप द्वारा अर्जित धन के प्रभाव से सज्जन मनुष्य भी पाप की ओर अग्रसर हो जाते हैं।
- व्यक्ति के पास ज्ञान-विवेक का अभाव हो, लेकिन यदि उसके पास अतुल्य धन है तो समाज में उसे ही आदर-सम्मान के योग्य माना जाएगा।

- कोई धनवान निर्धन हो जाए तो अपने भी उससे दूर हो जाते हैं। पत्नी, पुत्र, मित्र, सगे-संबंधी—सभी एक-एक कर उसका साथ छोड़ देते हैं।
- धन की शक्ति इतनी अपार है कि उसके प्रभाव से पराए भी अपने हो जाते हैं जबकि निर्धनता अपनों को भी पराए की श्रेणी में खड़ा कर देती है।
- धन का अभाव ही विपत्ति में मनुष्य को अकेला रहने के लिए विवश कर देता है।
- धन ही व्यक्ति को समाज में सर्वोच्च सम्मान प्रदान करता है।
- मध्यम वर्ग के व्यक्ति के लिए धन के साथ-साथ मान-सम्मान भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। इसी कारण धन की लालसा होते हुए भी वे नीच कार्य करने से डरते हैं।
- यदि वृद्धावस्था में मनुष्य के पास धन हो तो उसे भोजन के लिए दूसरों पर आश्रित नहीं होना पड़ता।
- नीच कर्मों द्वारा अर्जित धन नाशवान होता है।
- धन का अभाव मनुष्य को साधु-संत बना देता है।
- धन की अपेक्षा मनुष्य को अन्न-जल का अधिक दान करना चाहिए।
- धन का अभाव रोगग्रस्त को ईश्वर-भक्त बना देता है।
- धन मनुष्य का सच्चा हितैषी है।
- जिसके पास धन है, समस्त सुख उसके अधीन हैं।
- मनुष्य को दयनीय दशा से बचने के लिए धन का संचय अवश्य करना चाहिए।
- धन एवं अन्न का अत्यधिक उपयोग दरिद्रता और निर्धनता को आमंत्रित करता है।
- धन उसी स्थिति में महत्त्वपूर्ण और उपयोगी होता है, जब वह किसी एक व्यक्ति के लिए न होकर संपूर्ण समाज के लिए लाभकारी हो।
- एक व्यक्ति के उपयोग के लिए संचित धन एक कुलवधू की तरह केवल उसी को आनंद प्रदान करता है। इसलिए उसका होना या न होना समाज के लिए कोई अर्थ नहीं रखता।
- धन को स्वार्थ हेतु संचित करने के स्थान पर समाज-कल्याण हेतु प्रयोग में लाना चाहिए।
- धन का नशा इतना तीव्र होता है कि उसे पाकर बुद्धि-विवेक से युक्त ज्ञानवान व्यक्ति भी अहंकार से भर उठता है।
- पाप और अनाचार द्वारा अर्जित किया गया धन अधिक-से-अधिक दस वर्ष तक टिकता है। ग्यारहवें वर्ष संपूर्ण धन सूद समेत चला जाता है।
- धनार्जन द्वारा ही विद्या की परख होती है।
- धन का उपयोग न करके उसका सदैव संचय ही किया जाए तो वह संचित धन महत्त्वहीन हो जाता है।
- राजा तथा सज्जन मनुष्य को धन का संचय भोगों की अपेक्षा परोपकार एवं दान हेतु करना चाहिए।

धर्म

- जिस धर्म में दया का भाव न हो, उसे कभी स्वीकार नहीं करना चाहिए।
- अगर धर्म के सार को जानना है तो वह यही है कि जो काम आपको स्वयं के लिए अच्छा न

लगे, उसे दूसरों के लिए न करें।

- मृतक का परम हितैषी उसका धर्म होता है।
- ईश्वर की पूजा करना अथवा धार्मिक स्थलों की यात्र करना ही मनुष्य का धर्म नहीं है।
- केवल धर्म-मार्ग ही परम कल्याणकारी है।
- यह संसार नाशवान है, लेकिन धर्म का कभी नाश नहीं होता।
- धर्म अजर, अमर और शाश्वत है कोई भी उसे नष्ट नहीं कर सकता।
- अपने धर्म को त्यागकर दूसरे धर्म की ओर आकृष्ट होनेवाले व्यक्ति शक्ति-संपन्न होते हुए भी नष्ट हो जाते हैं।
- धर्म-कर्म व्यक्ति के लोक व परलोक के समस्त दुःखों का नाश कर देता है।
- धर्म के मर्म को समझने के लिए वैदिक शास्त्रें का ज्ञान आवश्यक है।
- दूसरों के दुःखों से दुखी होना और उनकी सहायता के लिए तत्पर रहना ही मनुष्य का वास्तविक धर्म है।
- यज्ञ, अध्ययन, दान, तप, सत्य, क्षमा, दया और लोभ विमुखता— धर्म के ये आठ मार्ग बताए गए हैं। इन पर चलनेवाला धर्मात्मा कहलाता है।
- परोपकार और मानवता ही सच्चा मानव-धर्म है।
- शिशु के जन्म के साथ ही ईश्वर उसके पेट भरने का प्रबंध कर देता है। उसे जो कुछ मिलना है, वह कोई भी छीन नहीं सकता। इसलिए आहार एवं धन का संग्रह छोड़कर धर्म-संग्रह पर ध्यान केंद्रित करो।
- पेट तो पशु भी भर लेते हैं, लेकिन धर्म-कर्म करके पुण्य प्राप्त करने का सौभाग्य केवल मनुष्य को ही प्राप्त होता है।
- पाप, असत्य एवं नीच कर्म से बचानेवाला धर्म ही सच्चा धर्म है।
- यदि धार्मिक कार्यों में चूक हो जाए तो उनका फल निरर्थक हो जाता है।
- मनुष्य को इस लोक में सांसारिक सुखों का यथावत् भोग करना चाहिए_ लेकिन साथ-ही-साथ धार्मिक कार्यों द्वारा परलोक को सुधारने के लिए भी प्रयासरत रहना चाहिए।

निंदा

- पर-निंदा समस्त कर्मों में अत्यंत नीच और बुरा कर्म है।
- पर-निंदा त्यागकर सारे संसार को अपने वश में किया जा सकता है।
- निंदा का त्याग करने से समस्त सुख मनुष्य के अनुकूल हो जाते हैं।
- मूर्ख लोग ज्ञानियों को बुरा-भला कहकर उन्हें दुःख पहुँचाते हैं। इस पर भी ज्ञानी जन उन्हें क्षमा कर देते हैं। क्षमा करनेवाला तो पाप से मुक्त हो जाता है और निंदक को पाप लगता है।
- पर-निंदा एक घोर व्याधि है। इससे बचना चाहिए।
- निंदक एवं चुगलखोर को पातकों से कुछ लेना-देना नहीं होता। निंदा-कर्म करके वे स्वयं पातकों का कार्य संपन्न करते हैं।

निर्धन

- विवेक एवं बुद्धि से युक्त किसी भी निर्धन व्यक्ति को तुच्छ और उपेक्षित दृष्टि से देखा जाता है।
- व्यक्ति निर्धन है तो उसे धैर्यवान् होना चाहिए। इससे वह थोड़े साधनों द्वारा भी निर्धनता के कष्टमय जीवन पर विजय प्राप्त कर लेगा।
- निर्धन लोग सदैव स्वादिष्ट भोजन करते हैं, क्योंकि उनकी भूख हर तरह के भोजन को स्वादिष्ट बना देती है। वहीं धनवान लोग भूख के अभाव में स्वादिष्ट व्यंजनों का भी आनंद लेने से वंचित रह जाते हैं।
- गरीबी दूसरे प्रकार से छठा महापातक है।
- प्रायः धनवान लोगों में खाने व पचाने की शक्ति नहीं होती और निर्धन लकड़ी खा लें तो उसे भी पचा लेते हैं।
- धन-वैभव से रहित व्यक्ति निर्धन नहीं होता, अपितु जो मनुष्य बुद्धि एवं विद्या से रहित होता है, वही वास्तविक निर्धन है।

निर्लोभी

- संसार से निर्लिप्त और निर्लोभी व्यक्ति के लिए धन एवं मणि-माणिक्य तिनके की भाँति हैं।

नेत्र-ज्योति

- नेत्र-ज्योति से बढ़कर संसार में कोई दूसरा प्रकाश नहीं है।
- आँखें मनुष्य की सबसे महत्त्वपूर्ण इंद्रियाँ हैं।
- नेत्रहीनों के लिए दर्पण महत्त्वहीन होता है। इसके लिए दर्पण को दोषी नहीं कहा जा सकता।

परदेश

- परदेश में व्यक्ति को समय और आय के अनुसार स्वयं को ढाल लेना चाहिए।
- परदेश में मनुष्य को अपने पास उपलब्ध संसाधनों से ही संतोष करना चाहिए।

परिश्रम

- जो वस्तु मनुष्य के लिए असाध्य है, उसकी सीमा से परे है, उसे तप अर्थात् अथक परिश्रम करके प्राप्त किया जा सकता है।
- श्रम की शक्ति असीमित होती है इसके बल पर असंभव भी संभव हो जाता है।
- परिश्रम से कभी जी न चुराएँ परिश्रम करके अपने जीवन को सुखमय बनाएँ।

परीक्षा

- काम के उत्तरदायित्व से सेवकों की, कष्ट या संकट के समय मित्रें की, दुःख या असाध्य बीमारी में सगे-संबंधियों की तथा धनहीन होने पर स्त्री की परीक्षा होती है।

परोपकार

- केवल परोपकार और परहित की भावना ही मनुष्य को पवित्र करती है।
- जिनका हृदय परोपकार से भरा हुआ है, उन्हें कभी विपत्तियों का सामना नहीं करना पड़ता।
- परोपकार से युक्त मनुष्य दुःख-रहित होकर सुखमय जीवन व्यतीत करता है।

पवित्र

- शास्त्रें में जल, गन्ना, दुग्ध, कंद, पान, फल और औषधि अत्यंत पवित्र कहे गए हैं। इसलिए इनका सेवन करने के बाद भी व्यक्ति धार्मिक कार्य संपन्न कर सकते हैं। इनसे किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होती।
- शरीर पर तेल की मालिश करवाने, श्मशान में जाने, संभोग तथा हजामत के बाद मनुष्य का शरीर अपवित्र हो जाता है। ऐसी स्थिति में स्नान ही ऐसी क्रिया है, जिससे मनुष्य पुनः पवित्र होता है।

पिता

- पिता वही योग्य है, जो अपनी संतान का भलीभाँति पालन-पोषण करता है, उनके दुःख-सुख का ध्यान रखता है।

पुण्य/मोक्ष

- मोक्ष की प्राप्ति तिलक लगाने या भगवा वस्त्र धारण करने की अपेक्षा ज्ञान-प्राप्ति से होती है।
- धर्म-कर्म, दान-तीर्थ, पूजा-अर्चना एवं व्रत-सत्संग आदि पुण्य कर्म मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करते हैं।
- क्षमा, सरलता, धैर्य, विनम्रता, ईमानदारी, उदारता, परोपकार, दया, सत्यता, प्रेम और पवित्रता जैसे गुणों को ग्रहण करना चाहिए। इससे मनुष्य समस्त पाप-कर्मों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त करता है।
- मनुष्य इस संसार में पूर्णतः अकेला है। संसार रूपी पथ पर चलते हुए उसे अकेले ही मोक्ष की ओर अग्रसर होना है।
- आत्म-कल्याण हेतु मनुष्य को जीवित अवस्था में ही स्वस्थ एवं नीरोग रहते हुए सभी कर्मों का यथाविधि पालन करना चाहिए, अन्यथा मृत्यु के उपरांत कुछ शेष नहीं रहेगा।
- यज्ञ के उपरांत दान-दक्षिणा नहीं दी गई तो यज्ञ का समस्त पुण्य नष्ट हो जाता है।

- जो व्यक्ति किसी की निंदा नहीं करता, केवल गुणों को देखता है, वह बुद्धिमान सदैव अच्छे कार्य करके पुण्य कमाता है और सब लोग उसका सम्मान करते हैं।
- अच्छे कार्य पुण्य में बढ़ोतरी करते हैं।
- पुण्यात्मा उत्तम यश और उत्तम योनि प्राप्त करता है।
- जिसे मोक्ष की इच्छा हो, वह दान-पुण्य, यज्ञ-अनुष्ठान, स्नान-ध्यान आदि साधनों का सहारा नहीं लेता, वह तो बस निस्स्वार्थ भाव से जीवन-यापन करता है।
- मनुष्य जीवन-मृत्यु के चक्र से मुक्त होकर मोक्ष पाना चाहता है तो उसे काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार आदि विकारों को पूरी तरह से त्याग देना चाहिए।
- मनुष्य को मोक्ष तभी प्राप्त हो सकता है, जब उसका लोक-परलोक सुधर जाए।
- भूखे को भोजन कराना और प्यासे को जल पिलाना परम पुण्यदायक है।

पुत्र

- केवल वही आदमी पुत्र कहलाने योग्य है, जो अपने माता-पिता की आज्ञा का सदैव पालन करता है।

पुरुषार्थ/पुरुषार्थी

- जो व्यक्ति पुरुषार्थी व कर्मशील होते हैं, उन्हें कभी दरिद्रता नहीं घेरती।
- जीव की आयु, कर्म, धन, विद्या और मृत्यु—इन पाँच बातों का निर्धारण उसी समय हो जाता है, जब वह माता के गर्भ में होता है। ये पाँचों बातें ईश्वर के अधीन हैं, इनमें कोई भी परिवर्तन नहीं कर सकता। लेकिन फिर भी मनुष्य को पुरुषार्थ करते रहना चाहिए।
- मनुष्य का धर्म है पुरुषार्थ करना, इसलिए उसे सदैव पुरुषार्थ करते रहना चाहिए।
- पुरुषार्थ द्वारा अर्जित किए गए थोड़े से धन में भी परम संतोष का अनुभव करें।
- मनुष्य को ईश्वर पर पूर्णतया विश्वास रखना चाहिए_ लेकिन वह पुरुषार्थ से मुख न मोड़े। जब वह पुरुषार्थ करेगा, तभी ईश्वर उसकी मनोकामनाएँ पूर्ण करेंगे।
- पुरुषार्थ एवं कर्म द्वारा प्रतिकूल भाग्य को भी अनुकूल बनाया जा सकता है।
- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चार पुरुषार्थ हैं। इनमें से अर्थ एवं काम लोक के तथा धर्म एवं मोक्ष परलोक के पुरुषार्थ कहे गए हैं।

प्रभुत्व

- प्रभुत्व का नशा अधिकार छिनने के बाद ही उतरता है।

प्रशंसा

- आत्मप्रशंसा करनेवाला व्यक्ति साक्षात् इंद्र ही क्यों न हो, वह सम्मान नहीं प्राप्त कर सकता।

- संसार जिस मनुष्य की प्रशंसा करता है, वही वास्तव में सम्मान योग्य है।

प्रेम

- जो भौंरा लकड़ी को भी भेदने की शक्ति रखता है, वह सुकोमल कमल-पँखुड़ियों में बंद होकर निष्क्रिय हो जाता है। ऐसा सिर्फ इसलिए है, क्योंकि वह कमल-पुष्प से प्रेम करता है और उसके अहित का भय ही उसे निष्क्रिय कर देता है।
- परायों से किया जानेवाला प्रेम ही सच्चा प्रेम है।

फल

- यज्ञ, हवन और अनुष्ठान—वेदों के फल हैं।
- शिष्टता, सदाचार और सुलक्षण—शास्त्र-अध्ययन के फल हैं।
- शारीरिक सुख एवं संतान-प्राप्ति—पत्नी के फल हैं।
- दान एवं उपभोग—धन के फल हैं।

बल

- बल से संकट टाले जा सकते हैं।
- बल कम या अधिक होने की अपेक्षा बुद्धि का अधिक होना महत्त्वपूर्ण होता है।
- तपस्वियों का बल तप है।
- वेद जाननेवालों का बल वेद है।
- अन्न की अपेक्षा आटा दस गुना अधिक शक्तिवर्द्धक होता है। आटे से दस गुना अधिक शक्ति दूध में होती है। मांस दूध से भी आठ गुना अधिक बल प्रदान करता है। लेकिन घी इन सबसे बढ़कर होता है।
- साग-सब्जी का अधिक सेवन रोगों को निमंत्रण देता है, जबकि दूध का प्रयोग शरीर-वृद्धि में सहायक होता है। घी बल एवं वीर्य में बढ़ोतरी करता है तथा मांस का सेवन चरबी को बढ़ाता है।
- दुष्टों का बल हिंसा है।
- गुणियों का बल क्षमा है।
- विशालता पर बुद्धि, चतुराई, ओज और बल द्वारा विजय पाई जा सकती है।

बाहरी आवरण

- जिस प्रकार बाहर से सुंदर दिखाई देनेवाले फल अधिकतर मीठे नहीं होते, उसी प्रकार मीठे वचन बोलनेवाले लोग भी घातक और अविश्वसनीय होते हैं।

बुढ़ापा

- ध्यानमग्न होकर निरंतर चलने से बुढ़ापे का आगमन होता है।
- घोड़ों को खूँटे से बाँधे रखने से वे जल्दी बुढ़ा जाते हैं।
- स्त्रियों को यौन-सुख से वंचित रखने से वे जल्दी बूढ़ी होने लगती हैं।
- वस्त्रें को अधिक देर तक धूप में डाले रखने से वे जल्दी फट जाते (बूढ़े हो जाते) हैं।

ब्राह्मण

- ऐसे ब्राह्मण के लिए स्वर्ग का सुख भी निरर्थक है, जो कर्म करने को महत्त्व देता है।
- ब्राह्मण को दिन में केवल एक ही बार भोजन करना चाहिए। इसी में वह संतुष्ट हो जाए।
- संतोषी ब्राह्मण को दिया गया दान पुण्य रूप में कई गुना बढ़कर वापस मिलता है।
- असंतुष्ट ब्राह्मण समाज में कभी सम्मान नहीं पाता।
- ब्राह्मण के ब्राह्मणत्व का मूल आधार सत्य है।
- धरती पर ब्राह्मण (विद्वान्) ही अमर वृक्ष का रूप है। संध्या उसकी जड़ तथा वेद उसकी शाखाएँ हैं। धर्म-कर्म उसकी शाखाओं पर लगनेवाले सुंदर पत्ते हैं।
- विद्या द्वारा धन अर्जित करनेवाले ब्राह्मण समाज के लिए व्यर्थ हैं। संसार में उनकी विद्वत्ता एवं ज्ञान का प्रसार कभी नहीं होता। ऐसे ब्राह्मण का एकमात्र उद्देश्य धनार्जन ही होता है।
- भ्रमण करनेवाले राजा, ब्राह्मण एवं योगी सबके लिए आदर के पात्र होते हैं।
- ब्राह्मण भ्रमण करता रहे तो उसे यजमानों की कमी नहीं रहती।
- ब्राह्मण को भोजन से अत्यंत प्रेम होता है, इसलिए पर्याप्त स्वादिष्ट भोजन द्वारा उसे संतुष्टि मिलती है।
- ब्राह्मण की शक्ति उसके ब्रह्म-ज्ञान में निहित है। इसके द्वारा वह बड़े-से-बड़े ज्ञानी को पल भर में पराजित कर सकता है।
- जो व्यक्ति दूसरों के सत्कर्मों में विघ्न डालनेवाला हो, ढोंग और पाखंड द्वारा लोगों को भ्रमित कर ठगता हो तथा जिसके अत्याचारों से लोग पीड़ित हों, ऐसा क्रूर व्यक्ति ब्राह्मण (विद्वान्) होते हुए भी पशु के समान है।

भाग्य

- मनुष्य जैसे भाग्य के साथ जन्म लेता है, उसकी बुद्धि भी उसी के अनुसार हो जाती है।
- मनुष्य जीवन भर जिन दुःखों एवं कष्टों को भोगता है, उसमें उसका कोई दोष नहीं होता। ये उसके भाग्य में पहले से ही लिखे हुए होते हैं।
- मनुष्य को भाग्यानुसार ही सगे-संबंधी एवं मित्र आदि मिलते हैं।
- मनुष्य को वही सब मिलता है, जो उसके भाग्य में लिखा होता है।
- भाग्य से पार पाना किसी के वश में नहीं है। यह भाग्य का ही खेल है कि एक राजा पल भर में रंक और एक रंक पल भर में राजा बन सकता है।
- ईश्वर ने मनुष्य का जैसा भाग्य लिख दिया, उसे उसी के अनुसार फल भोगना है।
- भाग्य को किसी भी तरह से बदला नहीं जा सकता।
- भाग्य के फलस्वरूप मनुष्य-जीवन में ऐसी अनेक घटनाएँ घटित होती हैं, जिनके बारे में

कोई कुछ नहीं जानता।

- केवल भाग्य के सहारे जीवनयापन करनेवाले मनुष्य अपने बहुमूल्य जीवन को व्यर्थ ही नष्ट कर लेते हैं।
- भाग्य को बदला नहीं जा सकता। मनुष्य जो लिखवाकर आया है, वह उसे भोगना ही होगा।

भ्रष्टाचार

- जैसे पानी में रहनेवाली मछली कब पानी पीती है, कोई नहीं जान सकता वैसे ही सरकारी कर्मचारी कब हेर-फेर कर लें, पता लगाना मुश्किल है।
- पंछियों के आकाश मार्ग का पता लगाया जा सकता है, लेकिन राजकर्मियों के भ्रष्टाचार की तह तक जाना बहुत कठिन होता है।
- जो राजकर्मी सरकारी आमदनी में कमी दरशाए, उसे भ्रष्टाचारी समझना चाहिए।
- जो राजकर्मी सरकारी आमदनी में जरूरत से ज्यादा वृद्धि दिखाए, उसे जन-उत्पीड़क समझना चाहिए।
- जो राजकर्मी छोटे से भ्रष्टाचार में भी लिप्त पाया जाए, उसे बड़े नुकसान का जिम्मेदार मानना चाहिए।

मन

- मन ही मनुष्य को विषय-वासनाओं की ओर धकेलकर उसे पाप-कर्म की ओर अग्रसर करता है।
- मन के वशीभूत हुआ मनुष्य जीवन-मृत्यु के चक्र से कभी मुक्त नहीं हो सकता।
- जो मनुष्य अहंकार-रहित होकर मन में ईश्वर-भक्ति की लौ प्रज्वलित कर लेता है, उसका मन जहाँ कहीं जाता है, वह वहीं समाधि की स्थिति में आ जाता है।
- मन समस्त बंधनों एवं दुःखों का कारण है।
- यदि मनुष्य का मन मैला व अपवित्र है तो तीर्थयात्र करके भी उसका कलुषित हृदय पवित्र नहीं होता।
- जिसका हृदय पवित्र और शुद्ध है, उसे तीर्थयात्र की आवश्यकता ही नहीं होती।
- बाहरी दिखावे या विषय-वासनाओं में डूबने से मन शांत और पवित्र नहीं होता। इसके लिए आंतरिक संतुष्टि आवश्यक है।
- हृदय में स्नेह हो तो अन्य समस्त गुण उसके समक्ष गौण हैं।

मनुष्य

- मनुष्य का आचार-विचार ही उसके कुल का परिचायक होता है। वार्त्तालाप से उसके देश विशेष का, व्यवहार से उसके स्नेहभाव एवं मान-सम्मान का तथा उसके शरीर से भोजन का ज्ञान होता है।
- मनुष्य का आचार-विचार ही उसके कुल का परिचायक होता है। वार्त्तालाप से उसके देश

विशेष का, व्यवहार से उसके स्नेहभाव एवं मान-सम्मान का तथा उसके शरीर से भोजन का ज्ञान होता है।

- मनुष्य को भोजन एवं धन की लालसा में डूबे रहने की अपेक्षा ज्ञान अर्जित करना चाहिए।
- संकट आने पर मनुष्य किसी भी सीमा को लाँघ सकता है।
- दूसरों के कल्याण को महत्त्व देनेवाला मनुष्य ही सच्चे अर्थों में पवित्र होता है।
- बुरी संगति में रहकर भी पवित्र मनुष्य की आत्मा कलंकित नहीं होती।
- जीवन-रक्षा हेतु मनुष्य को परिस्थिति के अनुसार स्वयं को परिवर्तित कर लेना चाहिए।
- हमारा समय कैसा चल रहा है, कौन हमारे मित्र और कौन शत्रु हैं, हमारा निवास-स्थान कैसा है, हमारी आय और व्यय कितना है, हमारी शक्ति कितनी है—ये सब बातें ही मनुष्य के चिंतन और मनन का केंद्रबिंदु होनी चाहिए।
- मनुष्य की प्रवृत्ति में स्थायित्व का अभाव होता है, इसलिए वह पल-प्रतिपल बदलती रहती है।
- सच्चे प्रेम का बंधन मनुष्य को परस्पर गहराई से बाँध देता है।
- मनुष्य का यदि ईश्वर के साथ स्नेह-बंधन जुड़ जाए तो वे सदैव निकट ही अनुभव होते हैं।
- दया, प्रेम, परोपकार, सहनशीलता आदि गुणों से परिपूर्ण मनुष्य का ही जीवन सार्थक है।
- मनुष्य का दृष्टिकोण ही वस्तु के महत्त्व को कम या अधिक करता है।
- मनुष्य जैसा देखना चाहता है, वस्तु वैसी ही दिखाई देती है।
- बुरे समय में मनुष्य की बुद्धि और विवेक उसका साथ छोड़ जाते हैं।
- मनुष्य को कभी किसी असहाय एवं पीड़ित व्यक्ति का उपहास नहीं उड़ाना चाहिए।
- मनुष्य को नारी के साथ अनावश्यक या अत्यधिक संसर्ग से बचना चाहिए।
- जो व्यक्ति धर्म-कर्म और नैतिक गुणों से युक्त है, वास्तव में वही मनुष्य कहलाने का अधिकारी है।
- समर्थ मनुष्य द्वारा किया गया अनुचित कार्य भी लोगों को उचित प्रतीत होता है।
- असमर्थ व्यक्ति द्वारा संपन्न उचित कार्य को भी लोग संदेह की दृष्टि से देखते हैं।
- जिस मनुष्य ने लोक को सुधारने के लिए पर्याप्त धन का संग्रह नहीं किया, जो सांसारिक मायाजाल से मुक्त होने के लिए ईश्वर-भक्ति नहीं करता, जिसने कभी रति-क्रिया का स्वाद न चखा हो—ऐसे मनुष्य का न तो लोक में भला होता है और न ही परलोक सुधरता है।
- किसी सुंदर नवयुवती द्वारा स्नेहयुक्त अथवा चंचल व्यवहार करते देख जो यह समझने लगता है कि वह उससे प्रेम करने लगी है, वह मनुष्य शीघ्र ही अपना सर्वस्व खो बैठता है।
- संकट से घिरा मनुष्य उसी प्रकार विवेक-शून्य हो जाता है, जिस प्रकार स्वर्ण-मृग का पीछा करते हुए भगवान् राम हो गए थे।
- जो मनुष्य समर्थ, योग्य एवं साहसी होते हैं, उनके लिए कोई भी कार्य असंभव या कठिन नहीं होता।
- जो मनुष्य संत पुरुषों से द्वेष करता है, वह शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।
- मनुष्य के सगे-संबंधी ही उसके जीवन का वास्तविक सहारा होते हैं।
- जिह्वा के स्वाद में पड़कर मनुष्य को अपने पास उपलब्ध भोजन का कभी निरादर नहीं करना चाहिए।

- मनुष्य का व्यक्तित्व उसके संपूर्ण कृतित्व का दर्पण होता है।
- मनुष्य को जिससे भी कोई शिक्षा या गुण मिले, उसे प्रेमपूर्वक स्वीकार करना चाहिए।
- मनुष्य के व्यक्तित्व को देखकर ही बुद्धिमान व्यक्ति उसके गुण-दोषों का अनुमान लगा सकता है।
- मनुष्य को दान, पूजा-पाठ और अध्ययन में निरंतर आगे बढ़ते रहना चाहिए।
- जो मनुष्य अधिकार के पीछे भागनेवाला होता है, वह लोभी एवं लालची होता है।
- समस्त इंद्रियों को जीत लेनेवाला मनुष्य रूप-सौंदर्य से परिपूर्ण युवती को देखकर भी भावहीन रहता है।
- रूप-सौंदर्य एवं शृंगार को महत्त्व देनेवाले मनुष्य का स्वभाव कामुक होता है।
- सुसंस्कृत एवं विवेक-युक्त मनुष्य विपरीत परिस्थितियों से लड़ने में सक्षम होने के कारण साहसपूर्वक विषम परिस्थितियों का सामना करते हैं।
- जो मनुष्य अच्छा काम करना चाहता है, उसे एक बार में ही कर लेना चाहिए।
- जो मनुष्य संपूर्ण जगत् को एक समान भाव से देखते हैं, उनके देवता जगत् के कण-कण में विद्यमान होते हैं।
- दान-पुण्य, गुण-शील, त्याग-कर्म तथा आचरण द्वारा सात्त्विक मनुष्य को शुद्धता की कसौटी पर परखा जाता है।
- जो मनुष्य स्पष्ट वक्ता एवं सत्यभाषी होते हैं, उनमें मक्कारी, धूर्तता और धोखेबाजी का लेशमात्र भी नहीं होता।
- मनुष्य केवल अपने कर्म, आचरण और स्वभाव द्वारा ही कुल को मान-सम्मान और गौरव के योग्य बनाता है।
- वैदिक ज्ञान, शास्त्रें की श्रेष्ठता और सात्त्विक मनुष्यों की निंदा करनेवाले मनुष्य लोक और परलोक—दोनों में ही भयंकर दुःख भोगते हैं।
- अच्छे मनुष्यों को उनके गुणों द्वारा पहचाना जाता है।
- सद्भावना द्वारा मनुष्य के समस्त भय नष्ट हो जाते हैं।
- ऐसे मनुष्य को भोजन करवाना व्यर्थ है, जिसका पेट भरा हुआ हो।
- मनुष्य जिस कार्य की जिम्मेदारी ले, उसे पूरी लगन और हिम्मत के साथ संपन्न करे।
- किसी भी कार्य की जिम्मेदारी लेने से पूर्व मनुष्य को उसके गुण-दोषों को भली-भाँति समझ लेना चाहिए।
- जो मनुष्य हाथ में लिये गए कार्य को पूरा करने में आलस्य दिखाते हैं या दूसरों को भ्रमित करते हैं, उन पर पुनः कोई भी विश्वास नहीं करता।
- मनुष्य जिस प्रकार के अन्न का भक्षण करता है, उसकी संतान वैसी ही होती है।
- यदि मनुष्य बेईमान, चरित्रहीन और दुष्ट प्रवृत्ति का है तो उसकी संतान भी उसके अवगुणों से युक्त होगी।
- धन, संपत्ति, मित्र, स्त्री और राज्य बार-बार मिल सकते हैं; लेकिन मनुष्य-शरीर केवल एक ही बार प्राप्त होता है। एक बार नष्ट हो जाने के बाद इसे पुनः प्राप्त करना असंभव है।
- जो मनुष्य प्रत्येक दिन सत्कार्य करते हैं, वास्तव में उनका ही जीवन सफल होता है।

महत्त्व

- जीवन का एक-एक क्षण, प्रहर, दिवस अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चारों जीवन के महत्त्वपूर्ण अंग हैं।
- रूप का महत्त्व गुणों से बढ़ता है।

महापुरुष

- दानशीलता, मृदु वाणी, ईश-पूजा और विद्वान्-भक्ति—जिस मनुष्य में इन चार गुणों का समावेश होता है, उसका मूल्यांकन महापुरुषों की श्रेणी में किया जाता है।
- युग के अंत में सुमेरु पर्वत अपना स्थान छोड़ देगा, सातों समुद्र अपनी मर्यादाएँ तोड़कर संपूर्ण पृथ्वी को डुबो देंगे लेकिन ऐसी विकट स्थिति में भी महापुरुष एवं संतजन अपनी प्रतिज्ञा व संकल्प पर अडिग रहेंगे।
- महानता के लिए मनुष्य में सद्गुणों एवं सच्चरित्र का होना आवश्यक है।
- संत-महात्माओं की संगति दुष्टों को भी सज्जन मनुष्य में परिवर्तित कर देती है।
- उच्च कुल में जनमा शील-गुण-संपन्न मनुष्य धनहीन हो जाए तो भी उसकी विनम्रता, विनयशीलता और सदाचरण नष्ट नहीं होते। वह विकट परिस्थिति में भी सद्व्यवहार करता है।

मांस

- मांस का प्रचुर सेवन मनुष्य के शरीर को विकृत कर देता है।
- मांस-भक्षण से मनुष्य तामसी प्रवृत्ति का हो जाता है। ऐसी स्थिति में दया, परोपकार, धैर्य और संतोष आदि गुण नष्ट हो जाते हैं।

माता/पिता

- जन्म देनेवाली माँ, यज्ञोपवीत संस्कार करानेवाला ब्राह्मण, विद्या प्रदान करनेवाला गुरु, अन्न प्रदान करनेवाला मनुष्य तथा भय का नाश करनेवाला—ये लोग पितृ-तुल्य हैं।
- माता-पिता के गुण-अवगुण एवं आचरण का प्रभाव उनकी संतान पर अवश्य पड़ता है।
- राजा की पत्नी, गुरु की पत्नी, मित्र की पत्नी, पत्नी की माता तथा स्वयं की माता—ये मनुष्य की पाँच आदरणीय माताएँ हैं।

मान/सम्मान

- अग्नि, गुरु, ब्राह्मण, गाय, कन्या, वृद्ध तथा बच्चे—इन्हें सदैव आदर और सम्मान देना चाहिए।
- नीच कुल में जन्म लेकर भी समाज में मान-सम्मान प्राप्त किया जा सकता है।

- जो व्यक्ति जरा भी कठोर नहीं बोलता हो तथा दुर्जनों का आदर-सरकार न करता हो, वही इस संसार में सबसे आदर-सम्मान पाता है।
- समाज में सद्गुणों द्वारा मनुष्य का सम्मान होता है। इसके लिए प्रचुर धन होना या न होना कोई अर्थ नहीं रखता।
- जैसे पूर्णिमा के चंद्रमा के स्थान पर द्वितीया का छोटा चंद्रमा पूजा जाता है, उसी प्रकार सद्गुणों से युक्त मनुष्य निर्धन एवं नीच कुल से संबंधित होते हुए भी पूजनीय होता है।
- ऐसा व्यक्ति अवगुणी होते हुए भी गुणवान है, जिसकी प्रशंसा उसकी पीठ पीछे भी की जाती है।
- मानसिक तृप्ति भोजन में नहीं, अपितु मान-सम्मान में निहित होती है।

मित्र/हितैषी

- सुख या दुःख—दोनों परिस्थितियों में साथ देनेवाला मनुष्य ही सच्चा मित्र कहलाता है।
- जिन मित्रें को सच्ची मित्रता का ज्ञान न हो, उन्हें कभी अपना प्रिय एवं विश्वासपात्र न मानें।
- दो व्यक्तियों की मित्रता तभी स्थायी रह सकती है, जब उनके मन से मन, गूढ़ बातों से गूढ़ बातें तथा बुद्धि से बुद्धि मिल जाती है।
- विश्वसनीय व्यक्ति ही सच्चा मित्र होता है।
- मित्रें का हर स्थिति में आदर करना चाहिए-चाहे उनके पास धन हो अथवा न हो तथा उनसे कोई स्वार्थ न होने पर भी वक्त-जरूरत पर उनकी सहायता करनी चाहिए।
- मुख पर प्रशंसा तथा पीठ पीछे निंदा करनेवाले मनुष्य मित्रता के योग्य नहीं होते। ऐसे मनुष्य विष मिले दूध के समान होते हैं। ऐसे लोगों से सदैव सतर्क रहें।
- निकृष्ट मित्र पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए और हितैषी मित्र से भी सावधान रहना चाहिए।
- जो मनुष्य अपने सच्चे सेवक पर कभी क्रोध नहीं करता, मुसीबत पड़ने पर ऐसा सेवक सच्चा हमदर्द सिद्ध होता है।
- घर-परिवार के सदस्यों के लिए केवल पतिव्रता नारी ही सच्ची मित्र है।
- जिसके क्रोध से भय लगता हो तथा जिस पर सच्ची आस्था न हो, वह मित्र नहीं हो सकता।
- जो मित्र न हो, उसे अपनी गुप्त नीति न बताएँ।
- मूर्ख मित्र तथा चंचल स्वभाववाले विद्वान् को अपनी गुप्त नीति न बताएँ।
- मित्र वह हो सकता है जिस पर पिता की तरह आस्था हो, अन्य इकट्ठे हुए लोग तो संगी-साथी मात्र हैं।
- जो मनुष्य कोई रिश्ता न होने पर भी मैत्रीपूर्ण व्यवहार करे, उसी को अपना सच्चा मित्र, बंधु, आधार और आश्रय मानना चाहिए।
- जिस व्यक्ति का चंचल व अस्थिर स्वभाव हो, जो बुजुर्गों की बातें नहीं सुनता, उससे ज्यादा समय तक स्थायी मित्रता संभव नहीं है। यह क्षणिक मित्रता कभी भी बड़ी शत्रुता में बदल सकती है।
- व्याधि से ग्रस्त व्यक्ति के लिए औषधि उसका वास्तविक तथा सच्चा मित्र है।

- पुरुषार्थ करनेवाला पिता, धर्म के अनुरूप आचरण करनेवाली माता, पतिव्रता पत्नी तथा विद्वान् पुत्र— मनुष्य के सच्चे हितैषी होते हैं।
- जो मित्र अविश्वासी, कपटी और दुष्ट हो, उसकी मित्रता की अपेक्षा मित्रहीन रहना अधिक उचित है।
- जो मित्र धोखेबाज और विश्वासघाती हों, उनसे सहयोग और स्नेह की आशा करना व्यर्थ है।

मूर्ख

- मूर्ख शिष्यों को उपदेश देने, दुष्ट स्त्री का भरण-पोषण करने अथवा दुःखी व्यक्तियों की संगति से विद्वान् मनुष्य भी कष्ट भोगते हैं।
- मूर्ख व्यक्ति दो पैरोंवाले पशु के समान है। ऐसे मनुष्य का अतिशीघ्र त्याग कर देना चाहिए।
- पैर में घुसा काँटा दिखाई न देने पर भी भयंकर पीड़ा पहुँचाता है, उसी प्रकार मूर्ख व्यक्ति द्वारा कहे गए मूर्खतापूर्ण वचन निरंतर सज्जन मनुष्य को बेधते रहते हैं।
- मूर्ख लोग कभी अपने से बड़े और सम्मानित लोगों का आदर नहीं करते।
- मूर्ख व्यक्ति स्वभाववश कभी मृदुभाषी नहीं होते।
- मूर्ख और अज्ञानी व्यक्ति न तो परिवार का उचित पालन-पोषण करने में समर्थ होता है और न ही उनकी यथोचित ढंग से रक्षा कर सकता है।
- उपदेश देनेवालों को मूर्ख अपना शत्रु मानते हैं।
- धन कमाने का कार्य एक मूर्ख व्यक्ति भी कर सकता है, लेकिन विद्यार्जन का सौभाग्य विरले को ही प्राप्त होता है।
- धन से परिपूर्ण होने पर भी मूर्ख अपने लिए मान-सम्मान अर्जित नहीं कर सकता_ परंतु एक विद्वान् निर्धन होने पर भी समाज में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करता है।
- बुद्धिहीन व्यक्तियों को कभी भी सत्कार्य के लिए प्रेरित नहीं करना चाहिए।
- वेदों व पुराणों की रचना बुद्धिमान एवं विवेकशील व्यक्तियों के लिए की गई है। ये केवल उन्हीं के लिए कल्याणकारी हैं, जो सोचने-समझने की शक्ति रखते हैं। इनसे मूर्खों का कल्याण नहीं हो सकता।
- बिना पढ़े ही स्वयं को ज्ञानी समझकर अहंकार करनेवाला, दरिद्र होकर भी बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनानेवाला तथा बैठे-बिठाए धन पाने की कामना करनेवाला व्यक्ति मूर्ख कहलाता है।
- जो व्यक्ति अपना काम छोड़कर दूसरों के काम में हाथ डालता है तथा मित्र के कहने पर उसके गलत कार्यों में उसका साथ देता है, वह मूर्ख कहलाता है।
- जो व्यक्ति अपने हितैषियों को त्याग देता है तथा अपने शत्रुओं को गले लगाता है और जो अपने से शक्तिशाली लोगों से शत्रुता रखता है, उसे महामूर्ख कहते हैं।
- जो व्यक्ति शत्रु से दोस्ती करता है, मित्र और शुभचिंतकों को दुःख देता है, उनसे ईर्ष्या-द्वेष करता है तथा सदैव बुरे कार्यों में लिप्त रहता है, वह मूर्ख कहलाता है।
- हे राजन्! जो व्यक्ति अनावश्यक कर्म करता है, सभी को संदेह की दृष्टि से देखता है, आवश्यक और शीघ्र करनेवाले कार्यों को विलंब से करता है, वह मूर्ख कहलाता है।

- जो व्यक्ति अपने पितरों का तर्पण-श्राद्ध नहीं करता, देवताओं का पूजन-वंदन नहीं करता, जिसके सज्जन लोग मित्र नहीं होते, वह मूर्ख है।
- जो अपनी गलती को दूसरे की गलती बताकर स्वयं को बुद्धिमान दरशाता है तथा अक्षम होते हुए भी क्रुद्ध होता है, वह महामूर्ख कहलाता है।
- जो व्यक्ति अयोग्य शिष्य को ज्ञानोपदेश देता है, शून्य की स्तुति करता है तथा कायरतापूर्ण कार्य करता है, वह मूर्ख है।
- यदि एक मूर्ख हीरे को पत्थर समझ ले तो उसमें हीरे का कोई दोष नहीं है। वह तब भी हीरा ही रहेगा।
- विद्वान् एवं गुण-युक्त मनुष्य की निंदा करनेवाला मूर्ख कहलाता है।
- विद्वानों के बीच घिरा रहनेवाला मूर्ख व्यक्ति ज्ञानवान नहीं हो सकता।
- मूर्ख का बल अतुल्य होने पर भी वह महत्त्वहीन है, क्योंकि बुद्धि के अभाव में वह कभी भी उसका उचित उपयोग नहीं कर पाएगा।
- मनुष्य प्रसंग से हटकर बात करे, शक्ति के प्रतिकूल आचरण करे तथा अनावश्यक क्रोध करे तो वह बुद्धिमान होकर भी मूर्ख कहलाता है।

मृत्यु

- कटु वचन बोलनेवाली स्त्री, पापयुक्त आचरण करनेवाले मित्र तथा विश्वासघाती एवं स्वेच्छाचारी सेवक की संगति करनेवाले मनुष्य के निकट निश्चय ही मृत्यु का वास होता है। ऐसा मनुष्य कभी भी मृत्यु का ग्रास बन सकता है।
- जीवन और मृत्यु एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।
- आज तक ऐसा कोई प्राणी नहीं हुआ, जिसने मृत्यु को जीत लिया हो।
- अधर्मी मनुष्य जीवित होते हुए भी मृतक के समान है।
- जीवन भर शुभ एवं सत्कर्म करनेवाला मनुष्य मृत्यु के उपरांत भी स्मरणीय होता है।
- अग्नि में जलने के बाद परलोक में जीव के साथ केवल उसके पाप और पुण्य जाते हैं।
- मनुष्य देह नाशवान है, इसलिए देह का अभिमान नहीं करना चाहिए।
- मृतक के साथ केवल उसके अच्छे और बुरे कर्म जाते हैं।

मोह

- मोह समस्त दुःखों की जड़ है।
- मोह ही जीवात्मा को बार-बार जीवन-मृत्यु के चक्र की ओर धकेलता है।
- मोह-रहित मनुष्य के लिए सभी एक समान होते हैं। उसे न तो किसी के दुखी होने से दुःख होता है और न ही किसी के सुखी होने से सुख।
- विद्वान् मनुष्य को अत्यधिक मोह का परित्याग करके सुखमय जीवन व्यतीत करना चाहिए।
- मोह-माया से ग्रस्त संसार विषय-वासनाओं की ओर धकेलता है।

मौन

- मौन रहने से वाद-विवाद नहीं होता।
- भोजन के समय मनुष्य को मौन रहना चाहिए।
- एक वर्ष तक नियमित मौन धारण कर भोजन करनेवाला मनुष्य कई युगों तक स्वर्ग का सुख भोगता है। देवगण भी उसकी नित्य पूजा करते हैं।

यज्ञ

- यज्ञ करते समय यदि उसके विधि-विधान में किसी प्रकार की कमी रह जाए तो यज्ञ फल-प्रदायक की अपेक्षा कष्ट-प्रदायक बन जाता है।
- यज्ञ तभी करें, जब उसे यथाविधि करने की सामर्थ्य हो।

याचक

- व्यक्ति याचक बनकर किसी व्यक्ति के घर जाता है तो उसका मान-सम्मान और अहं नष्ट हो जाता है।
- याचक से सभी डरते हैं सगे-संबंधी, मित्र आदि भी उसका साथ छोड़ देते हैं।
- अभावग्रस्त की सहायता करने में लोग कतराते हैं।
- संसार में सबसे हलका तिनका है, तिनके से भी हलकी रुई है; लेकिन याचक इन दोनों से हलका होता है। वायु का एक हलका सा झोंका भी तिनके और रुई को उड़ाकर ले जाता है, परंतु प्रचंड वायु भी याचक को नहीं उड़ा पाती। याचक कहीं कुछ माँग न बैठे, यही सोचकर वायु भी अपना रुख मोड़ लेती है।
- याचक सभी द्वारा तिरस्कृत होता है।
- यदि कोई दुर्जन किसी याचक को भगा दे तो इससे याचक को कोई फर्क नहीं पड़ता। वह किसी और घर से भिक्षा प्राप्त कर लेता है, लेकिन तिरस्कृत याचक पुनः दुर्जन के पास नहीं जाता। इससे उसका यश कलंकित होता है।

योग

- योग द्वारा शांति प्राप्त होती है।

यौवन

- यौवन असीमित कष्ट प्रदान करनेवाला है।

रक्षा

- धन द्वारा धर्म की रक्षा, योग द्वारा विद्या की रक्षा, मृदु और कोमल वाणी द्वारा राजा की रक्षा

तथा पतिव्रता स्त्री द्वारा घर-गृहस्थी की रक्षा होती है।

रोगी

- रोगी मुरदे के समान होता है।

राजा

- प्रजा के सुख में ही राजा का सुख निहित है। प्रजा का कल्याण ही राजा का कल्याण है। राजा को अपने सुख से बढ़कर प्रजा के सुख की चिंता करनी चाहिए।
- लोगों को जीतने के लिए राजा को शक्ति और साधनों का संतुलित प्रयोग करना चाहिए।
- क्रोध, लालसा, लालच, अहंकार, ईर्ष्या और मोह छह ऐसे शत्रु हैं, जो राजा का नाश कर देते हैं।
- जो राजा जनहित के कार्य करता है, आपात्काल में ऐसे राजा को सहारा देने प्रजा उमड़ पड़ती है।
- जो राजा अपनी इंद्रियों को अपने अधीन नहीं रखता, वह पूरी धरती का मालिक होने के बावजूद बरबाद हो जाता है।
- जो राजा आमोद-प्रमोद में मस्त रहता है, वह जल्दी ही दुश्मनों का सहज निशाना बन जाता है।
- जैसे पागल हाथी सबकुछ बरबाद कर देता है, वैसे ही अशिक्षित राजा अपने राज्य को नष्ट कर देता है।
- अनुशासित राजा ही अनुशासित राज्य की स्थापना कर सकता है।
- जो राजा अपने वादों को पूरा नहीं करता, अपना विश्वास खो देता है, उसका राज्य ज्यादा दिनों तक नहीं चलता।
- जिस राजा की प्रजा उसके प्रति वफादार होती है, वह उनके थोड़े से सहयोग से भी बड़े-बड़े कार्य कर जाता है।
- दुष्ट और चरित्रहीन राजा को या तो उसकी प्रजा बरबाद कर देती है या दुश्मन।
- राजा की भूमिका इंद्र (दाता) और यम (मृत्यु) के समान होती है। जो राजा का मान-सम्मान करता है, उसे इनाम मिलता है और जो उसका अपमान करता है, वह सजा पाता है।
- जो राजा गुणी और प्रजापालक होता है, वह चाहे छोटे से राज्य का भी स्वामी क्यों न हो, पूरी पृथ्वी द्वारा पूजा जाता है और हमेशा अपने कार्यों में विजय प्राप्त करता है।
- राजा का चरित्र जैसा होता है, उसके आसपास रहनेवालों का चरित्र भी वैसा ही बन जाता है।
- सारी विधाओं का एक महत्त्वपूर्ण केंद्रीय उपदेश है-‘अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण रखो’।
- जो राजा अपनी प्रजा के लालन-पालन, हित और कल्याण में कोई कसर नहीं उठाए रखता, वह स्वर्ग में जाता है और जो इसके उलट करता है, उसे नरक में भी जगह नहीं मिलती।
- जो राजा सच्चाई, साक्ष्य, गवाह और कानून के चार सिद्धांतों के अनुसार न्याय करता है, वह पूरी पृथ्वी पर जीत हासिल करता है।

- अपने राजदार दोस्त से कभी दुश्मनी मोल न लें, वरना आपको नष्ट होने से कोई नहीं बचा सकेगा।
- जिस राज्य का राजा अत्यंत दुष्ट, अधर्मी और पापी हो, वहाँ की प्रजा कभी सुखपूर्वक नहीं रह सकती।
- राजा की शक्ति उसका बाहुबल है, जिससे वह शत्रुओं का नाश करता है।
- जो राजा काम और क्रोध जैसे विकारों को पास भी नहीं फटकने देता, सुयोग्य व्यक्तियों की धन देकर सहायता करता है, कार्य की मर्यादा जानता है, शास्त्रें का जानकार है और अपने कर्म-कर्तव्य को यथाशीघ्र पूरा करता है, उसका सब लोग आदर करते हैं।
- जिस राजा पर प्रजा विश्वास करती है, जो अपराधी सिद्ध हुए व्यक्तियों को ही दंडित करता है, जो यह जानता है कि कितना दंड अभीष्ट है तथा जिसे क्षमा का प्रयोग आता हो, लक्ष्मी स्वयं उस राज्य में चली आती हैं।
- जो राजा अपने राज्य की स्थिति, लाभ, हानि, खजाना, सेना, प्रजा इत्यादि के विषय में नहीं जानता है, उसका राज्य ज्यादा दिनों तक नहीं टिकता।
- 'अब तो राज्य प्राप्त हो गया'-यह सोचकर अन्यायपूर्ण व्यवहार नहीं करना चाहिए। ऐसे अन्यायी राजा का राजपाट वैसे ही नष्ट हो जाता है जैसे बुढ़ापा रूप-यौवन को नष्ट कर डालता है।
- पृथ्वी के गर्भ में संचित जल, पतिव्रता नारी, कल्याणकारी राजा तथा संतोषी ब्राह्मण—ये चारों परम पवित्र हैं।
- कल्याणकारी राजा सदैव प्रजा के कल्याण और परोपकार में लीन रहता है।
- महत्त्वाकांक्षा से रहित राजा प्रजा के कल्याण और उसकी उन्नति के लिए कभी सजग नहीं होता।
- धर्म से विमुख होकर राजा का पतन निश्चित होता है।
- यथा राजा तथा प्रजा—जैसी सरकार वैसी जनता।

लक्ष्मी

- निठल्लों, असंतुष्टों, असंयमी, निस्तेज, दुखी, पीड़ित, नास्तिक तथा पागलों के घरों से लक्ष्मी दूर रहती हैं।
- लक्ष्मी न तो प्रचंड ज्ञानियों के पास रहती हैं, न नितांत मूर्खों के पास। न तो उन्हें ज्ञानियों से लगाव है, न मूर्खों से। जैसे बिगड़ैल गाय को कोई-कोई ही वश में कर पाता है, वैसे ही लक्ष्मी भी कहीं-कहीं ही ठहरती हैं।
- चंचलता लक्ष्मी (धन) का स्वभाव है, इसलिए वह कहीं भी नहीं ठहरतीं।

लाड़-प्यार/पालन-पोषण

- अधिक लाड़-प्यार तथा उचित-अनुचित सभी इच्छाएँ पूर्ण कर देने से बच्चों में अनेक अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं। भविष्य में ये अवगुण ही बच्चों की प्रगति और विकास में बाधा बन जाते हैं। अतः लाड़-प्यार के साथ प्रताड़ना भी परम आवश्यक है।

- एक कुम्हार चाक पर घूमते मिट्टी के लोंदे को कभी प्यार से थपथपाकर, कभी सहलाकर तो कभी पीटकर उसे एक सुंदर बरतन का आकार दे देता है। बाद में वही बरतन अपनी सुंदरता से लोगों को आकर्षित करता है। माता-पिता को कुम्हार की भाँति मिट्टी रूपी संतान का पालन-पोषण करना चाहिए।
- पिता अपनी संतान का पाँच वर्ष तक लाड़-प्यार के साथ पालन-पोषण करें। इसके बाद अगले दस साल तक उस पर सख्ती रखें। संतान जब सोलह वर्ष की हो जाए तो उसके साथ मित्रवत् व्यवहार करें।

लाभ/हानि

- जो लाभ भविष्य में बड़े विनाश का कारण बने, उसे त्याग देना चाहिए।
- जो हानि भविष्य में बड़े लाभ का कारण बने, उसका सम्मान करना चाहिए।
- उस लाभ को भी हानि ही मानना चाहिए, जो बड़ी क्षति का कारण बने।

लोभ/स्वार्थ/पाप

- जो व्यक्ति लोभ और स्वार्थ में डूबे रहते हैं, वे जीवन भर वास्तविक सुखों से वंचित रहते हैं।
- स्वार्थी मनुष्य स्वार्थ-सिद्धि तक आश्रयदाता के साथ जुड़ा रहता है लेकिन एक बार स्वार्थ पूरा हो जाने के बाद वह आश्रयदाता को त्याग देता है। इनसे सावधान रहना चाहिए।
- स्वार्थी एवं पापी व्यक्ति नेत्रहीन के समान है।
- प्रजा द्वारा किए जानेवाले पापों का फल केवल राजा को भोगना पड़ता है।
- राजा द्वारा किए गए पापों का बोझ पुरोहित ढोता है।
- पत्नी के पाप पति पर तथा शिष्यों के पाप गुरु पर प्रभावकारी होते हैं।
- अधिक लालच नाश कराता है।
- पवित्र जल में स्नान करने के बाद भी पापी मनुष्य की अशुद्धता दूर नहीं होती।
- याचक को धन देते समय लोभी को अत्यंत कष्ट होता है, इसलिए उसकी दृष्टि में दान, भिक्षा या चंदा माँगनेवाला प्रत्येक व्यक्ति उसका शत्रु है।
- लोभी के लिए पृथ्वी की सारी संपत्ति, धन-धान्य, पशु, ऐश्वर्य—सब कम हैं।
- धन के लोभी से सत्य का अनुसरण करने की आशा नहीं करनी चाहिए।
- यदि मनुष्य लोभी है तो उसे दुर्जनों की कोई आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि लोभ ही उसका सबसे बड़ा शत्रु होता है, जो उसे नाश की ओर धकेलता है।

वश

- लोभी को लालच द्वारा वश में करना चाहिए।
- हठी या अभिमानी व्यक्ति विनम्रता द्वारा वश में किए जा सकते हैं।
- मूर्ख एवं बुद्धिहीन व्यक्ति की यदि इच्छा पूर्ण कर दी जाए तो उसे वश में करना अत्यंत सरल हो जाता है।

- कवि की कल्पना के महल को भेदना किसी के वश में नहीं है।
- विद्वान् व्यक्ति को वश में करने के लिए उसे वास्तविक स्थिति की सही जानकारी देकर अपने अनुकूल बनाया जा सकता है।
- बलवान व्यक्ति को बल द्वारा जीतना अत्यंत कठिन है, इसलिए उसे उसके अनुकूल व्यवहार करके वश में करें।
- दुष्ट शत्रु को उसके प्रतिकूल व्यवहार से वश में करें।
- दुष्ट शत्रु को उसके प्रतिकूल व्यवहार से वश में करें।
- छोटे से अंकुश द्वारा शक्तिशाली हाथी को वश में किया जा सकता है।

वर्षा-जल

- स्वास्थ्य एवं उपयोगिता की दृष्टि से वर्षा-जल सबसे शुद्ध और पवित्र होता है।

वाणी

- मीठी वाणी होने के कारण कोयल का काला रंग भी गौण हो जाता है।
- मधुर वाणी बोलनेवाला मनुष्य शत्रुओं को भी अपना मित्र बना लेता है।
- नशे में चूर व्यक्ति की वाणी संयमहीन होकर अनियंत्रित हो जाती है। इसलिए वह कैसा व्यवहार करेगा, यह जानना संभव नहीं होता।
- कठोर बात सीधी मर्मस्थल, हिंड्ढन्यों तथा दिल पर जाकर चोट करती है और प्राणों को टीसती रहती है।
- जो बातों से मनुष्य पर मर्माघात करता है, वह महानीच नाश को प्राप्त होता है।
- श्रेष्ठ स्वभाव तथा मृदु वाणी से युक्त मनुष्य के लिए कुछ भी असंभव नहीं होता।
- पृथ्वी के सभी रत्नों में जल, अन्न और मधुर वचन सबसे बहुमूल्य रत्न हैं।
- वाणी पर पूरा संयम बरतना तो बहुत मुश्किल है, लेकिन चमत्कारपूर्ण और विशेष अर्थों से युक्त बात भी अधिक नहीं बोली जा सकती।
- मीठे शब्दों में बोली गई बात हितकारी होती है और उन्नति के मार्ग खोलती है लेकिन यदि वही बात कटुतापूर्ण शब्दों में बोली जाए तो दुःखदायी होती है और उसके दूरगामी दुष्परिणाम होते हैं।
- दुनिया में मीठा बोलनेवालों की कमी नहीं है लेकिन जो मीठा भी बोले और हितकारी भी, ऐसे बोलनेवाले तथा सुननेवाले दोनों ही कठिनाई से मिलते हैं।
- बाणों से छलनी और फरसे से काटा गया जंगल पुनः हरा-भरा हो जाता है, लेकिन कटु वचन से बना घाव कभी नहीं भरता।
- शरीर के भीतर तक धँसे लोहे के भयानक बाण को खींचकर बाहर निकाला जा सकता है, लेकिन कड़वे शब्द-बाण को कदापि नहीं निकाला जा सकता, क्योंकि वह हृदय के भीतर जाकर धँस जाता है।
- शरीर के भीतर तक धँसे लोहे के भयानक बाण को खींचकर बाहर निकाला जा सकता है, लेकिन कड़वे शब्द-बाण को कदापि नहीं निकाला जा सकता, क्योंकि वह हृदय के भीतर

जाकर धँस जाता है।
- मधुर वचनों द्वारा शत्रुओं को भी जीतकर अपना बनाया जा सकता है।
- सपेरा बीन द्वारा मीठी तान छेड़कर सर्प को अपने वश में कर लेता है, शिकारी मृग को वश में कर लेता है, उसी प्रकार मनुष्य मधुर वचन बोलकर किसी को भी अपने वश में कर सकता है।
- मीठी वाणी द्वारा लोगों को जीतो और अपने समस्त मनोरथ सिद्ध करो।
- मधुर वचन मन को हर्षित करनेवाले तथा परम सुखदायक होते हैं।
- मधुर वचन बोलकर मनुष्य शत्रुओं को भी अपना बना सकता है।
- मीठा बोलने के लिए कुछ व्यय नहीं करना पड़ता।
- मीठी बोली संसार पर विजय प्राप्त करने का अचूक मंत्र है।

विद्या/ज्ञान

- विद्या-विहीन मनुष्य मान-सम्मान प्राप्त नहीं कर सकता।
- कामधेनु से युक्त व्यक्ति जिस प्रकार भूखा नहीं मर सकता, उसी प्रकार विद्यार्जन के उपरांत मनुष्य किसी भी संकट को झेलने के योग्य हो जाता है।
- संसार में विद्या की ही पूजा की जाती है उसके समान बहुमूल्य कुछ और नहीं है।
- व्यावहारिक ज्ञान बुजुर्गों की सेवा से अर्जित होता है।
- ज्ञान मनुष्य की मूर्खता और अज्ञानता को समाप्त कर देता है।
- परदेश में विद्या ही माँ के समान है, जो कदम-कदम पर मनुष्य की रक्षा करती है।
- विद्या वह है, जो बंधन-मुक्त करती है।
- परदेश जानेवाले व्यक्तियों के लिए विद्या सच्ची मित्र है।
- भौतिक सुख और विद्या-प्राप्ति दो अलग-अलग मार्ग हैं। इन्हें एक साथ ग्रहण करना असंभव है। जहाँ भौतिक सुख मनोहर और सुखदायक हैं, वहीं विद्यार्जन कठोर तप के समान है। इसे प्राप्त करने के लिए स्वयं को स्वर्ण की भाँति तपाना होगा।
- ज्ञान द्वारा मनुष्य का डर दूर होता है।
- समस्त विकारों के नाश हेतु ज्ञान सर्वोत्तम साधन है।
- विद्या गुप्त धन है, जिसे कोई चुरा नहीं सकता_ अपितु इसे जितना अधिक खर्च किया जाएगा उतनी ही यह बढ़ती जाएगी।
- विद्या-प्राप्ति कठोर तप के समान है।
- विद्यार्थी कठिन मार्ग पर चलते हुए विद्या रूपी अमूल्य धन प्राप्त करता है।
- विद्यार्जन करनेवाले मनुष्य की समस्त मनोकामनाएँ अवश्य पूर्ण होती हैं।
- मूर्ख एवं विद्यारहित मनुष्य जीवन भर माता-पिता के लिए कष्ट और पीड़ा का कारण बनता है।
- जो पुत्र विद्यारहित और माता-पिता का आज्ञाकारी न हो, ऐसे पुत्र को त्याग देना ही उचित है।
- अगर ज्ञान को उपयोग में न लाया जाए तो वह विस्मृत हो जाता है।

- यज्ञ-हवन आदि के अभाव में वेदों द्वारा अर्जित ज्ञान व्यर्थ होता है।
- अल्पविद्या भयंकर होती है।
- विद्या सभी मनोरथ पूर्ण करनेवाली कामधेनु गाय है।
- विद्या-प्राप्ति के मार्ग में अनेक कठिनाइयों एवं दुःखों का सामना करना पड़ता है। इसलिए सुखों की आशा करनेवाले विद्यार्थियों को विद्या-प्राप्ति का विचार त्याग देना चाहिए।
- जिस व्यक्ति में सोचने-समझने की शक्ति न हो, जो ग्रहण करने का इच्छुक न हो, उसे अनेक प्रयास करने के बाद भी ज्ञानवान नहीं बनाया जा सकता।
- जो विद्यार्थी मोह-माया और सुखों में लीन होकर विद्या-प्राप्ति की बात सोचते हैं, उन्हें अपने उद्देश्य में कभी सफलता नहीं मिलती।
- विद्या को व्यवहार में उतारनेवाला विद्यार्थी ही जीवन में उसका उचित लाभ उठा सकता है।
- विद्यार्थियों को चाहिए कि वे अर्जित विद्या को पुस्तकों तक सीमित न रहने दें, जीवन में उसका सदुपयोग करें।
- सुख और मोह-माया विद्या-प्राप्ति के मार्ग की सबसे बड़ी बाधाएँ हैं।
- ज्ञानहीन व्यक्ति पशु के समान हैं।
- जिस मनुष्य को शरीर और आत्मा से संबंधित वास्तविक ज्ञान प्राप्त हो जाता है, वह किसी भी स्थिति में समाधि की अवस्था प्राप्त कर लेता है।

विद्वान्/बुद्धिमान

- वह मनुष्य बुद्धिमान होता है, जो बुरे समय अथवा विपत्तिकाल के लिए धन की बचत करता है। ऐसी बचत की यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए।
- धीर-गंभीर, सज्जन एवं बुद्धिमान व्यक्ति अनेक विपत्तियों के आने की स्थिति में भी शांत बना रहता है।
- विद्वान् को निम्न स्थान देकर मूर्ख को उच्च स्थान पर बैठाने के बाद भी विद्वान् का महत्त्व कम नहीं होता।
- जब तक मुसीबतें, परेशानियाँ और संकट दूर रहते हैं, तब तक बुद्धिमान व्यक्तियों को उनसे डरना चाहिए_ लेकिन एक बार जब वे उनसे घिर जाएँ तो पूरी निडरता, साहस और धैर्य के साथ उन्हें उनका सामना करना चाहिए।
- विद्वानों से मित्रता करने से पूर्व उनकी भली प्रकार से परीक्षा करें। केवल ज्ञान ही परम संतोषकारी है।
- विद्वान् और सज्जन पुरुषों की संगति करने में ही मानव-सुख निहित है।
- बुद्धिमान वही है, जो अपने से अधिक बलवान के सामने झुक जाए।
- बुद्धिमान लोगों को चाहिए कि वे स्त्री, राजा, सर्प, शत्रु, भोग, धातु तथा लिखी बात पर आँख मूँदकर भरोसा न करें।
- जिस व्यक्ति को बुद्धि-बल से मारा जाता है, उसके उपचार में योग्य चिकित्सक, औषधियाँ, जड़ी-बूटियाँ, यज्ञ-हवन, वेद मंत्र आदि सारे उपाय व्यर्थ हो जाते हैं।
- जिस प्रकार स्वर्ण में सुगंध, गन्ने में फल तथा चंदन में पुष्प नहीं होते, उसी प्रकार न तो

विद्वान् धनी होते हैं और न ही राजा दीर्घायु।

- विद्वानों को मूर्खों की, धनवान को दरिद्रों की, पतिव्रता को वेश्या की तथा सुहागिन को विधवा के ईर्ष्या-युक्त व्यवहार की उपेक्षा कर देनी चाहिए।
- विद्वान् के समक्ष ऊँच या नीच कोई अर्थ नहीं रखता।
- आवश्यकता के समय केवल बुद्धिमान व्यक्ति ही अपने बल का यथोचित उपयोग कर सकता है, इसलिए कम होने पर भी उसका बल अधिक महत्त्वपूर्ण है।
- जिस प्रकार बगुला एकाग्रचित्त होकर धैर्यपूर्वक अपने शिकार पर दृष्टि टिकाए रखता है, उसी प्रकार विवेकशील और बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि वह अपनी इंद्रियों को नियंत्रित कर एकाग्रचित्त होकर अपने कार्य को संपन्न करे।
- बुरे समय में बुद्धिमान लोग भी अनुचित कार्य कर बैठते हैं।
- पापों से दूर रहनेवाले मनुष्य ही सच्चे बुद्धिमान हैं।
- विद्वान् व्यक्ति भी संकट में उलझकर सोचने-समझने की शक्ति खो बैठता है।
- बुद्धिमान व्यक्ति में सहनशीलता का गुण अपरिहार्य रूप से होना चाहिए।
- ज्ञानवान विद्वान् सदैव मान-सम्मान पाते हैं।
- विद्वान् व्यक्ति बिना कुछ कहे ही सामनेवाले के अंतर्भावों को भलीभाँति जान-समझ लेते हैं। उनकी बौद्धिकता और विद्वत्ता के समक्ष कुछ भी रहस्यमय नहीं रहता।
- बुद्धि-विवेक और गुणों से युक्त व्यक्ति कुरूप हो तो भी उसके मार्ग में बाधा नहीं आती।
- बुद्धिमान व्यक्ति थोड़ा सा ज्ञान भी अर्जित कर ले तो वह उसी से अपने ज्ञान को बढ़ा लेता है।
- केवल वही व्यक्ति बुद्धिमान है, जो समय के अनुरूप वार्त्ता करे, शक्ति के अनुरूप पराक्रम करे तथा सामर्थ्य के अनुरूप क्रोध करे।
- उचित समय पर ही बुद्धिमान व्यक्ति को उसके अनुकूल कार्य करने चाहिए। इससे कार्यों में अवश्य सफलता प्राप्त होती है।
- हीरे को पैरों से लटकाकर काँच को सिर पर सजा लिया जाए तो भी हीरे का मूल्य कम नहीं होता।

विश्वासघात

- तीखे नाखूनोंवाले हिंसक पशु, बड़े सींगवाले पशु, तीव्र वेगवाली नदियाँ, शस्त्रधारी व्यक्ति, स्त्रियाँ तथा राजकुल से संबंधित व्यक्ति विश्वास के योग्य नहीं होते—ये कभी भी विश्वासघात कर सकते हैं।

विष

- जिस व्यक्ति की पाचन-शक्ति क्षीण है, उनके लिए श्रेष्ठ-से-श्रेष्ठ भोज्य पदार्थ भी विष-तुल्य हैं।
- सभा एवं गोष्ठियाँ दरिद्र के लिए विष के समान हैं।
- जल का सेवन भोजन से पूर्व करें अथवा अन्न पच जाने के बाद। यदि भोजन के एकदम

बाद जल का सेवन किया जाए तो यह विष के समान प्रभावशाली होकर शरीर को शनैः-शनैः नष्ट कर देता है।

- वृद्ध के लिए युवा पत्नी विष की भाँति होती है।

वीर

- जो किसी कमजोर का अपमान नहीं करता, हमेशा सावधान रहकर बुद्धि-विवेक द्वारा शत्रुओं से निबटता है, बलवानों के साथ जबरन नहीं भिड़ता तथा उचित समय पर शौर्य दिखाता है, वही सच्चा वीर है।

वैश्य

- लौकिक कर्मों में संलग्न होकर पशुपालन, खेतीबाड़ी तथा व्यापार आदि करनेवाला मनुष्य वैश्य कहलाता है।

व्यवहार

- एक मनुष्य के साथ दूसरा मनुष्य जैसा व्यवहार करता है, प्रतिक्रियास्वरूप उसे उस मनुष्य के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए।
- जो मनुष्य आपके साथ सद्‌व्यवहार करे, आप भी उसके साथ उसी प्रकार का व्यवहार करें लेकिन जो मनुष्य आपका बुरा करना चाहता है, उसका प्रत्युत्तर बुराई से ही देना चाहिए।

शत्रु

- वे माता-पिता अपनी संतानों के घोर शत्रु हैं, जो उन्हें अच्छी शिक्षा नहीं दिलाते।
- मोह शत्रु के समान मनुष्य का नाश कर देता है।
- संतान पर ऋण का बोझ छोड़कर प्राण त्यागनेवाला पिता ही उसका वास्तविक शत्रु है।
- जो स्त्री व्यभिचारिणी होकर पाप-कर्म में लिप्त रहती है, वह अपनी संतान की शत्रु होती है।
- अत्यधिक सुंदर स्त्री पति की शत्रु होती है।
- मूर्ख एवं हठी पुत्र पिता के लिए अनिष्टकारी शत्रु होता है।
- चंद्रमा के प्रकाश में चोर चोरी करने में असमर्थ हो जाते हैं, इसलिए वे उसे अपना शत्रु मानते हैं।

शाश्वत

- आयु, कर्म, धन-संपदा, विद्या और मृत्यु का समय—ये पाँचों चीजें शाश्वत हैं, जो शिशु के गर्भकाल में ही लिख दी जाती हैं।
- धर्म शाश्वत (निरंतर रहनेवाला) है, सुख-दुःख अशाश्वत_ जीव शाश्वत है, इसका कारण

यह शरीर अशाश्वत है।

शिष्य

- चरित्रहीन और अधर्मी शिष्य सदैव यश को कलंकित करते हैं। ऐसे में उनका न होना ही श्रेष्ठ है।
- जो मनुष्य अन्न के क्रय-विक्रय, ज्ञानार्जन, खान-पान और लेन-देन के व्यवहार में संकोच करते हैं, उन्हें अनेक समस्याओं एवं कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।
- विद्यार्थी को भी सेवा द्वारा गुरु के पास संचित ज्ञान को अर्जित करना चाहिए।

शील

- शील (उत्तम स्वभाव व उत्तम आचरण) ही मनुष्य का प्रमुख गुण है। जिस व्यक्ति का शील नष्ट हो जाता है-धन, जीवन और रिश्तेदार उसके किसी काम के नहीं रहते अर्थात् उसका जीवन व्यर्थ हो जाता है।
- शील द्वारा दुर्गति और कष्टों का अंत होता है।

शुद्धि

- भस्म की रगड़ से काँसे का पात्र चमक उठता है, खटाई से ताँबे का बरतन शुद्ध हो जाता है, तेज बहाव से नदी निर्मल हो जाती है और रजस्वला होने के बाद स्त्री शुद्ध एवं पवित्र हो जाती है।
- कार्य वही सफल होता है, जिसमें मन की शुद्धता और समर्पण की भावना निहित हो।
- मनुष्य को बाहरी शुद्धता की अपेक्षा अपने मन को शुद्ध करना चाहिए।

शोक

- शोक करने से रूप-सौंदर्य नष्ट होता है।
- शोक करने से पौरुष नष्ट होता है।
- शोक करने से ज्ञान नष्ट होता है।
- शोक करने से मनुष्य का शरीर दुःखों का घर हो जाता है।
- शोक करने से इच्छित वस्तु नहीं मिलती। उससे तो केवल शरीर कष्ट पाता है और शत्रु खुश होते हैं।

श्रद्धा

- जैसे धार्मिक स्थल को देखकर हमारे मस्तक स्वतः श्रद्धा से झुक जाते हैं, वैसे ही गुणी व्यक्ति ज्ञान और आस्था के प्रतीक बनकर मनुष्यों के हृदय में स्थान प्राप्त करते हैं।

- मनुष्य किसी भी वस्तु को ईश्वर मानकर उसकी पूजा कर सकता है, लेकिन इसके लिए सच्ची श्रद्धा और भक्ति का होना आवश्यक है।
- बिना श्रद्धा के सिद्धि नहीं मिलती।

संख्या बल

- तपस्या, पूजा-अर्चना एवं पाठ का अध्ययन अकेले ही करना चाहिए।
- दो व्यक्तियों के बीच में पढ़ाई अच्छी तरह से होगी। इससे अधिक संख्या होने की स्थिति में पढ़ाई की अपेक्षा बातों की अधिकता रहेगी।
- गायन हेतु तीन व्यक्ति ही पर्याप्त हैं।
- अकेला वृक्ष चाहे कितना ही बड़ा और मजबूत हो, आँधी उसे जड़ से उखाड़कर धराशायी कर सकती है।
- जो वृक्ष समूह में होते हैं, वे मिल-जुलकर बड़ी-बड़ी आँधियों को झेल जाते हैं।
- यात्र के लिए चार व्यक्ति उपयुक्त हैं।
- खेतीबाड़ी के लिए पाँच व्यक्ति पर्याप्त हैं।
- युद्ध हेतु अधिक-से-अधिक लोगों की आवश्यकता होती है।
- वार्त्तालाप में मग्न दो व्यक्तियों के बीच में से कभी नहीं निकलना चाहिए।
- दो ब्राह्मणों, अग्नि एवं ब्राह्मण, दंपती, स्वामी एवं सेवक तथा बैल एवं हल के बीच में से होकर निकलने से किसी-न-किसी अनिष्ट का भय बना रहता है।
- एक हथौड़ा बड़े-बड़े पर्वतों को तोड़ डालता है।
- अनेक श्वान मिलकर एक सिंह का मुकाबला कर सकते हैं।
- तिनके छप्पर के रूप में एकजुट होकर वर्षा का जल रोक लेते हैं।
- निर्बल व्यक्ति एक हो जाएँ तो वे बड़े-से-बड़े शक्तिशाली का भी सामना कर सकते हैं।
- विद्यार्थी, सेवक, पथिक, भूख से पीड़ित, भयग्रस्त, भांडारी और द्वारपाल—इन सातों का कार्य जागने से ही संपन्न होता है। यदि ये सोते हुए मिलें तो इन्हें जगा देना चाहिए।
- राजा, वेश्या, यम, अग्नि, तस्कर, बालक, याचक और ग्राम कंटक (गाँववासियों को परेशान करनेवाले)—ये आठों दूसरे मनुष्य के दुःख एवं संताप को नहीं जानते। इनसे दया की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

संतोष

- संतोष के समान परम सुख नहीं है।
- मनुष्य के पास जितने भी साधन उपलब्ध हों, उसे उसी में संतोष करना चाहिए।
- संतोष इंद्र के विहार-स्थल नंदन वन के समान सुखदायक और मनमोहक है।

संन्यासी

- संन्यासी उसी व्यक्ति को कहा जा सकता है, जो न किसी से प्रेम करता हो, न किसी से

घृणा और शत्रुता_ जो न किसी की बुराई करता हो और न प्रशंसा।

संबंध

- अपने स्तर के व्यक्ति के साथ स्थापित प्रेम और सौहार्द-युक्त संबंध ही मनुष्य के लिए उचित होते हैं।
- मनुष्य को सामाजिक स्तर पर बराबर के व्यक्ति के साथ संबंध बनाने चाहिए।

सज्जन

- दूसरों का वैभव, ऐश्वर्य, समृद्धि और सुखों को देखकर सज्जन मनुष्य कभी ईर्ष्या नहीं करते, अपितु वे अपने थोड़े से साधनों से ही संतुष्ट हो जाते हैं।
- सज्जनों के घर में अन्न-जल, बैठने के स्थान और मीठी बोली की कमी कभी नहीं होती।
- कभी-कभी मनुष्य के लिए उसकी अत्यधिक सरलता, सादगी और सीधा स्वभाव अभिशाप बन जाता है। वन में टेढ़े-मेढ़े वृक्षों को कोई नहीं छूता, इसके विपरीत सीधे खड़े वृक्ष काट दिए जाते हैं। अतः मनुष्य को इतना सज्जन भी नहीं होना चाहिए कि कोई भी उसे ठग ले।
- सज्जन पुरुष की बुराई करके आप चाहे जितनी दूर जाकर छिप जाएँ, वह आपको ढूँढ़ ही लेगा और फिर आपको कोई भी नहीं बचा पाएगा। वह आपको आपकी बुराई का दंड देगा।
- जिन लोगों की बुराई करने से संकट की स्थिति पैदा हो जाती है, ऐसे सज्जनों को सदैव देवता की भाँति पूजा जाना चाहिए।
- उपलब्ध साधनों में संतुष्ट रहनेवाला तथा नित्य ईश्वर का मनन-चिंतन करनेवाला मनुष्य ही सज्जन कहलाता है।
- जो व्यक्ति माँगने पर शत्रुओं की भी सहायता करता है—अनर्थ ऐसे सज्जन के पास भी नहीं फटकते।
- सज्जन पुरुषों की संगति से बहुत कुछ अच्छा सीखने को मिल जाता है।
- सज्जन एवं बुद्धिमान मनुष्य की दिनचर्या सत्कर्मों द्वारा आरंभ होती है तथा उनका संपूर्ण दिन अन्य व्यक्तियों की भलाई और परोपकार में व्यतीत हो जाता है।
- सज्जन व्यक्ति सन्मार्ग को नहीं छोड़ते।
- सज्जन व्यक्तियों के लिए मान-सम्मान सबसे बढ़कर होता है। इसके लिए वे बड़ी-से-बड़ी बहुमूल्य वस्तु भी अस्वीकार कर देते हैं।
- सज्जन मनुष्य की संतान उसी के समान बुद्धिमान, सरल, ईमानदार और सहनशील होगी।
- संसार में भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों के अनेक मनुष्य वास करते हैं। हमें केवल सज्जन और श्रेष्ठ मनुष्य से ही संपर्क बढ़ाने चाहिए।
- सज्जन मनुष्य कितना भी दुर्जनों की संगति में रह ले, उस पर उनकी संगति का कभी असर नहीं पड़ता। जिस प्रकार चंदन वृक्ष पर लिपटे साँपों के जहरीले होने पर भी चंदन जहरीला नहीं होता।
- जिस प्रकार मिट्टी में फला-फूला पुष्प मिट्टी की गंध से सराबोर नहीं होता, उसी प्रकार दुर्जन मनुष्यों की संगति में रहकर भी सज्जन मनुष्य अपनी सज्जनता और सत्कर्मों को नहीं

भूलता।

- साधु अथवा सज्जन पुरुष के दर्शन मात्र से पुण्य फल का आशीर्वाद प्राप्त किया जा सकता है; जबकि पवित्र तीर्थ का आशीर्वाद पाने के लिए हमें लंबी यात्रएँ करनी पड़ती हैं।
- चरित्रवान, सहनशील, संतोष, परोपकार तथा सहृदयता के गुणों से युक्त व्यक्ति ही सज्जन कहलाते हैं।
- धर्म के प्रति तत्परता, मृदु वाणी, दानशीलता, मैत्री-भाव, गुरु-भक्ति, गंभीरता, सद्-व्यवहार, परोपकार, शास्त्रज्ञता, सुंदर-सुरुचिपूर्णता और प्रसन्नतायुक्त स्वभाव—सज्जन मनुष्य के गुण हैं।
- जिस धन को पाने के लिए अधिकतर व्यक्ति विभिन्न प्रकार के नीच कर्म करते हैं, वह सज्जनों के लिए तिनके के समान है।
- जैसे साधु-संन्यासी एक-एक दाना जोड़कर जीवन-निर्वाह करते हैं, वैसे ही सज्जन पुरुष को महापुरुषों की वाणी, सूक्तियों तथा सत्कर्मों के आलेखों का संकलन करते रहना चाहिए।
- भौतिक सुख या परिवर्तन सज्जनों के स्वभाव को प्रभावित नहीं कर सकते।
- सज्जन पुरुषों की संगति से विषय-वासनाओं तथा अपवित्र विचारों का नाश हो जाता है और मनुष्य सन्मार्ग की ओर अग्रसर होता है।

सदाचार/सदाचारी

- जिस कुल में सदाचार नहीं है, वहाँ अकूत संपत्ति मौजूद हो तो भी उस कुल की उन्नति नहीं हो सकती।
- जो व्यक्ति सुख मिलने पर खुशियाँ नहीं मनाता, वह सदाचारी कहलाता है।
- दूसरों को दुःख में पड़ा देखकर जो स्वयं आनंदित नहीं होता, वह सदाचारी है।
- जो दान देकर पछताता नहीं है, वह सत्पुरुष कहलाता है।
- जो व्यक्ति गुणवान लोगों को सदा आगे रखता है, वह श्रेष्ठ नीतिवान है।
- जो व्यक्ति अपनी मर्यादा की सीमा को नहीं लाँघता, वह संसार में सूर्य के समान तेजवान होकर ख्याति पाता है।
- उच्च या निम्न कुल से मनुष्य की पहचान नहीं हो सकती। मनुष्य की पहचान उसके सदाचार से होती है, भले ही वह निम्न कुल में ही क्यों न पैदा हुआ हो।
- विद्या का अहंकार, धन-संपत्ति का अहंकार, कुलीनता का अहंकार तथा सेवकों के साथ का अहंकार बुद्धिहीनों को होता है, सदाचारी तो दमन द्वारा इनमें भी शांति खोज लेते हैं।

सफलता

- निश्चित एवं साध्य कर्म को छोड़कर अनिश्चित एवं असाध्य कर्मों की ओर दौड़नेवाला मनुष्य कभी सफल नहीं होता।
- पूर्णता प्राप्त किए बिना किसी काम में सफलता नहीं मिलती है।

सत्कर्म

- मनुष्य को सत्कर्म करने चाहिए। इससे उसका अनिष्ट टल नहीं सकता, लेकिन उसके प्रभाव को कम अवश्य किया जा सकता है।

सत्य

- सत्य एक वैरागी की माता के समान, ज्ञान पिता के समान, धर्म भाई के समान, दया बहन के समान, शांति पत्नी के समान तथा क्षमा पुत्र के समान है।
- सत्य से बड़ा कोई तप नहीं होता।
- सत्य का तेज देह के सभी विकार नष्ट कर डालता है।
- जीवन में सत्य धारण करनेवाले को तप की कोई आवश्यकता नहीं होती।
- विद्या अर्जित करने के बाद मनुष्य जीवन के सत्य को जान लेता है।
- सत्य पर ही यह संपूर्ण पृथ्वी टिकी हुई है।
- सत्य का तेज ही आकाश में सूर्य के रूप में प्रकाशित होता है।
- सत्य के बल से ही वायु चलती है तथा दिन, रात व मौसम में परिवर्तन होता है।
- सत्य की शक्ति ने ही इस संपूर्ण सृष्टि को स्थिर किया हुआ है।
- जिस प्रकार नौका में बैठकर ही समुद्र पार किया जा सकता है, उसी प्रकार सत्य की सीढ़ियाँ चढ़कर स्वर्ग पहुँचा जा सकता है।
- मनुष्य को सत्य का पालन करते हुए उसी के अनुसार आचरण करना चाहिए।

समुद्र

- अनेक नदियों का जल स्वयं में समाहित करने के बाद भी समुद्र शांत बना रहता है।
- जल से परिपूर्ण समुद्र में वर्षा करना व्यर्थ है।

सुख-दुःख

- सुख-दुःख एवं उतार-चढ़ाव प्रत्येक मनुष्य के जीवन में आते-जाते हैं। मनुष्य को असहाय होने के स्थान पर साहसपूर्वक इनका सामना करना चाहिए।
- बुरे एवं बदनाम गाँव में निवास करना, कुलहीनों की सेवा करना, क्रोधी पत्नी, मूर्ख पुत्र तथा विधवा कन्याक—ये छह कारण शरीर को दुःख रूपी अग्नि से तप्त करनेवाले हैं।
- जहाँ सदैव खुशियों और आनंद का वास हो, पत्नी मृदुभाषिणी एवं पतिव्रता हो, संतान बुद्धिमान और सुशिक्षित हो, पर्याप्त धन की उपलब्धता हो, सेवक आज्ञाकारी और स्वामीभक्त हो, जहाँ अतिथियों का यथोचित आदर-सत्कार किया जाता हो, ईश्वर की भक्ति का वास हो तथा संत-महात्माओं का सत्कार हो— ऐसा घर ही सुखों से युक्त तथा स्वर्ग-तुल्य होता है।
- धन-प्राप्ति, स्वस्थ जीवन, अनुकूल पत्नी, मीठा बोलनेवाली पत्नी, आज्ञाकारी पुत्र तथा

धनार्जन करनेवाली विद्या का ज्ञान—ये छह बातें संसार में सुख प्रदान करती हैं।

- स्वस्थ रहना, उऋण रहना, परदेश में न रहना, सज्जनों के साथ मेल-जोल, स्व-व्यवसाय द्वारा आजीविका चलाना तथा भय-युक्त जीवनयापन—ये छह बातें सांसारिक सुख प्रदान करती हैं।
- सेवकों से उदारता-युक्त व्यवहार, सगे-संबंधियों से प्रेम-युक्त व्यवहार, दुष्टों के प्रति कठोरता का व्यवहार, सज्जन एवं विद्वानों के प्रति स्नेह तथा नम्रता का भाव, शत्रुओं के समक्ष साहस-युक्त व्यवहार, गुरुजन के प्रति धीरता व सौम्यता का भाव तथा स्त्रियों के प्रति वाक्-चातुर्य का भाव लोक-व्यवहार का हिस्सा है। इसका अनुपालन करनेवाला व्यक्ति समाज में सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करता है।
- ईर्ष्यालु, घृणा करनेवाला, असंतोषी, क्रोधी, सदा संदेह करनेवाला तथा दूसरों के भाग्य पर जीवन बितानेवाला—ये छह तरह के लोग संसार में सदा दुःखी रहते हैं।
- गृहस्थ जीवन के सुखों के लिए मनुष्यों को पूजा-अर्चना, दान-दक्षिणा तथा ब्राह्मण-सत्कार से संबंधित कर्म करते रहने चाहिए।

सेवा

- बड़ों की सेवा तथा विद्वानों का मान-सम्मान करनेवालों की कीर्ति, आयु, ज्ञान और पराक्रम बढ़ते हैं।

स्त्री/पत्नी

- स्त्री भी धन के समान है, इसलिए उसकी भी रक्षा करें। लेकिन इससे पूर्व मनुष्य को अपनी सुरक्षा के प्रति सतर्क रहना चाहिए। यदि वह स्वयं सुरक्षित है, तभी धन और स्त्री की रक्षा करने में समर्थ होगा।
- पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों का आहार दुगुना, लज्जा चौगुनी, साहस छह गुना तथा काम-भाव आठ गुना अधिक होता है।
- योगी के लिए स्त्री शव-तुल्य है, कामांध व्यक्ति के लिए रूप-सौंदर्य की प्रतिमा तथा श्वान के लिए मांस के पिंड के अतिरिक्त कुछ नहीं है।
- स्त्रियों का आदर करें, लेकिन उनके अधीन न हों।
- स्त्रियों को घर की लक्ष्मी कहा गया है। उनकी यत्नपूर्वक रक्षा करें।
- जो स्त्री अत्यंत क्रोधी हो, उसे पत्नी-रूप में कभी ग्रहण न करें।
- स्त्री यदि हठ पर आ जाए तो वह क्या कर सकती है, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।
- पतिव्रता नारी के समान तेजस्वी कोई अन्य नहीं होता।
- पति को सुख देनेवाली स्त्री ही वास्तव में पत्नी कहलाती है।
- व्यापार में लोक-व्यवहार और घर के लिए उत्तम गुणों से युक्त स्त्री उपयुक्त है।
- चरित्रहीन स्त्री की अपेक्षा कुरूप किंतु ज्ञानवान् एवं विवेकी स्त्री अधिक सुंदर है।
- स्त्रियों को अनावश्यक भ्रमण की प्रवृत्ति से दूर रहना चाहिए।

- व्यभिचारिणी पत्नी के बिना रहना अधिक श्रेयस्कर है।
- स्त्री की शक्ति के विषय में मनुष्य अनभिज्ञ होते हैं।
- चरित्रहीन स्त्री से दूर रहें, अन्यथा वह बदनामी का कारण बन जाएगी।
- पत्नी वृद्धावस्था में सच्ची साथी होती है।
- जो स्त्री यथावत् पतिव्रत धर्म का पालन नहीं करती तथा जो कपट बुद्धि की होती है, उससे प्रेम और सुख की कभी प्राप्ति नहीं होती।
- पत्नी चाहे कुरूप हो या रूपवान्, दुष्ट हो या सुशील, मूर्ख हो या बुद्धिमान—मनुष्य को उसका परित्याग नहीं करना चाहिए।
- स्त्रियों की शक्ति उनका रूप-सौंदर्य, यौवन और मृदु भाषा है।
- व्यभिचारिणी पत्नी के लिए उसका पति शत्रु के समान होता है, क्योंकि वह उसकी स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाने का प्रयास करता है।
- स्त्री की निकटता अनेक विकार उत्पन्न करती है तथा दूर रहने पर उसके पथभ्रष्ट होने का भय रहता है।
- जो स्त्री पति की छोटी-से-छोटी आज्ञा का भी पालन करती है, उसका लोक-परलोक सुधर जाता है।
- जो स्त्री पति की आज्ञा के बिना व्रत-उपवास आदि भी करती है तो पति की अकाल मृत्यु का कारण बनती है।
- पत्नी को पति की आज्ञा और पतिव्रता धर्म— दोनों का यथावत् पालन करना चाहिए। यही पत्नी-धर्म है।
- पति-सेवा समस्त शुभ कर्मों से बढ़कर है।
- जो स्त्री पतिव्रता-धर्म का पालन करते हुए पति-सेवा में निरंतर लीन रहती है, उसे दान, व्रत, तीर्थयात्र तथा पवित्र नदियों में स्नान करने की कोई आवश्यकता नहीं होती।
- पति-सेवा रूपी तप में स्वयं को समर्पित कर पत्नी परम पवित्र हो जाती है।
- वृद्धावस्था की विवशता से स्त्री पतिव्रता बन जाती है।

स्थान

- जिस स्थान पर मनुष्य का आदर-सम्मान न हो, आजीविका के साधन न हों, अनुकूल मित्र एवं संबंधी न हों, विद्यार्जन के उपयुक्त साधन न हों—ऐसा स्थान सर्वथा अनुपयुक्त है। इसलिए बिना विलंब किए उसे छोड़ देना चाहिए।
- व्यापार करनेवाले लोगों के लिए संसार का कोई भी स्थान दूर नहीं होता।
- विद्वान् के लिए कोई भी स्थान विदेश नहीं है।

स्वभाव

- एक ही वृक्ष और एक ही टहनी पर उगनेवाले बेर एवं काँटे स्वभाव के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं।
- एक ही नक्षत्र अथवा एक ही समय में एक ही गर्भ से उत्पन्न होनेवाले बच्चों का स्वभाव

भिन्न-भिन्न होता है।

- दानशीलता, मृदु वाणी, धैर्य और उचित-अनुचित—ये गुण मनुष्य में जन्मजात होते हैं। जब शिशु जन्म लेता है तो ये स्वाभाविक रूप से उसमें विद्यमान होते हैं। इन्हें अभ्यास द्वारा प्राप्त करना असंभव है।
- मनुष्य का स्वभाव उसके उन जन्मजात गुणों पर आधारित होता है, जिसे ब्रह्माजी ने उसके भाग्य में लिखा है। वह इन्हीं के अनुसार आचरण करता है।
- मनुष्य में जन्म के साथ ही स्वाभाविक गुणों का आविर्भाव होता है तथा वे मृत्यु तक उसके साथ रहते हैं।
- अच्छे संस्कार पूर्व जन्म से जुड़े होते हैं।
- अच्छे संस्कार पूर्व जन्म सेदान, विद्या, संयम, शील आदि जैसी अच्छी आदतें अनेक पिछले जन्मों से लगातार चलती हुई भाग्यवश वर्तमान जन्म से भी मिलती हैं। जुड़े होते हैं।

स्वीकारना

- अशुद्ध वस्तुओं में से स्वर्ण, निम्न मनुष्य से शिक्षा तथा निम्न कुल से सुसंस्कृत स्त्री-रत्न को विलंब किए बिना स्वीकार कर लेना चाहिए।

हितैषी

- मनुष्य का सच्चा हितैषी वही है जो बीमारी, अकाल या शत्रु द्वारा कष्ट दिए जाने पर, किसी संकट या विषम परिस्थिति में फँस जाने पर तथा मृत्यु के उपरांत श्मशान तक साथ देता हो।

ज्ञानी

- जो मनुष्य अपनी योग्यता से भलीभाँति परिचित हो और उसी के अनुसार कल्याणकारी कार्य करता हो, जिसमें दुःख सहने की शक्ति हो, जो विपरीत स्थिति में भी धर्म-पथ से विमुख नहीं होता, ऐसा व्यक्ति ही सच्चा ज्ञानी कहलाता है।
- सद्गुण, शुभ कर्म, भगवान् के प्रति श्रद्धा और विश्वास, यज्ञ, दान, जन-कल्याण आदि—ये सब ज्ञानी जन के शुभ लक्षण होते हैं।
- जो व्यक्ति क्रोध, अहंकार, दुष्कर्म, अति-उत्साह, स्वार्थ, उद्दंडता इत्यादि दुर्गुणों की ओर आकर्षित नहीं होते, वे ही सच्चे ज्ञानी हैं।
- जो लोग जरूरत के मुताबिक काम करते हैं, लोभ में पड़कर अधिक के पीछे नहीं भागते, वे ज्ञानी हैं।
- ज्ञानियों की संगति करनेवाला जो सद्बुद्धि पाता है, वही सच्चा ज्ञानी है।
- ज्ञानी पुरुष ही धर्म और अर्थ के मार्ग पर सच्चाई से आगे बढ़कर उन्नति पाता है।
- दूसरे लोग जिसके कार्य, व्यवहार, गोपनीयता, सलाह और विचार को कार्य पूरा हो जाने के बाद ही जान पाते हैं, वही व्यक्ति ज्ञानी कहलाता है।

- जो व्यक्ति अपनी सांसारिक बुद्धि को धर्म और अर्थ के वरण में लगाता है, जो भोगों से सदैव दूर रहकर पुरुषार्थ में रत रहता है, वही ज्ञानी है।
- विवेकशील और बुद्धिमान व्यक्ति सदैव यह चेष्टा करते हैं कि वे यथाशक्ति कार्य करें और वे वैसा करते भी हैं तथा किसी वस्तु को तुच्छ समझकर कभी उसकी उपेक्षा नहीं करते, वे ही सच्चे ज्ञानी हैं।
- ज्ञानी लोग किसी भी विषय को शीघ्र समझ लेते हैं, लेकिन उसे धैर्यपूर्वक देर तक सुनते रहते हैं। किसी भी कार्य को कर्तव्य समझकर करते हैं, कामना समझकर नहीं और व्यर्थ किसी के विषय में बात नहीं करते।
- जो व्यक्ति दुर्लभ वस्तु को पाने की इच्छा नहीं रखते, नाशवान् वस्तु के विषय में शोक नहीं करते तथा विपत्ति पड़ने पर घबराते नहीं हैं, डटकर उसका सामना करते हैं, वही ज्ञानी हैं।
- जो व्यक्ति किसी भी कार्य-व्यवहार को निश्चयपूर्वक आरंभ करता है, उसे बीच में नहीं रोकता, समय को बरबाद नहीं करता तथा अपने मन को नियंत्रण में रखता है, वही ज्ञानी है।
- जो व्यक्ति न तो सम्मान पाकर अहंकार करता है और न अपमान से पीड़ित होता हैय जो जलाशय की भाँति सदैव क्षोभ-रहित और शांत रहता है, वही ज्ञानी है।
- जो व्यक्ति सभी भौतिक वस्तुओं की वास्तविकता को जानता हो, सभी प्रकार के कार्य करने में निपुण हो तथा उन कार्यों को भी जानता हो जिन्हें दूसरे करने में असमर्थ हों, ऐसा व्यक्ति ज्ञानी होता है।
- जो व्यक्ति विपुल धन-संपत्ति, ज्ञान, ऐश्वर्य, श्री इत्यादि को पाकर भी अहंकार नहीं करता, वह ज्ञानी कहलाता है।

विविध

- दिमाग मानव-शरीर को नियंत्रित करता है। उसके बिना शरीर व्यर्थ होता है।
- सर्प, राजा, सिंह, शूकर, बालक, मूर्ख, मधुमक्खी तथा दूसरे के कुत्ते को कभी नहीं जगाना चाहिए, अन्यथा व्यक्ति को भयंकर कष्ट उठाना पड़ सकता है।
- व्यक्ति को नशीला पेय नहीं पीना चाहिए, अयोग्य कार्य नहीं करना चाहिए, योग्य कार्य करने में आलस्य नहीं करना चाहिए तथा कार्य सिद्ध होने से पहले उद्घाटित करने से बचना चाहिए।
- जो व्यक्ति भरोसे के लायक नहीं है उस पर तो भरोसा न ही करें, लेकिन जो बहुत भरोसेमंद है उस पर भी अंधे होकर भरोसा न करें क्योंकि जब ऐसे लोग भरोसा तोड़ते हैं तो बड़ा अनर्थ होता है।
- ब्राह्मणों, बुजुर्गों, देवी-देवताओं, राजा, बच्चों और रोगियों पर क्रोध आए भी तो उसे दबा लेना चाहिए।
- बुद्धि का अमीरी या गरीबी से कोई संबंध नहीं है।
- ईमानदार, दानी, अपनी बात पर दृढ़ रहनेवाले, कर्तव्यपरायण और मृदुभाषी लोग शत्रुओं को भी अपना बना लेते हैं।

- आलसी, अधम, दुर्जन तथा लोभी के हाथों सौंपी गई संपत्ति बरबाद हो जाती है।
- कोई पुरुष दान देकर प्रिय होता है, कोई मीठा बोलकर प्रिय होता है, कोई अपनी बुद्धिमानी से प्रिय होता है लेकिन जो वास्तव में प्रिय होता है, वह बिना प्रयास के प्रिय होता है।
- जो प्रिय लगता है उसके बुरे काम भी अच्छे लगते हैं लेकिन जो अप्रिय है, वह चाहे बुद्धिमान, सज्जन या विद्वान् हो, बुरा ही लगता है।
- धनी लोग यदि गुणहीन हैं तो भी उन्हें छोड़ देना चाहिए।
- जो लोग स्वार्थी होते हैं, वे मतलब निकल जाने पर दोस्ती तोड़ लेते हैं।
- दीन-दुखियों, रोगियों, दरिद्रों, अपने संबंधियों आदि के कल्याण में लगा व्यक्ति संपन्न और सुखी जीवन बिताता है।
- कुटुंबी लोग तारनेवाले भी होते हैं और डुबोनेवाले भी।
- जो व्यक्ति मुसीबत के समय भी कभी विचलित नहीं होता, बल्कि सावधानी से अपने काम में लगा रहता है, विपरीत समय में दुःखों को हँसते-हँसते सह जाता है, उसके सामने शत्रु टिक ही नहीं सकते वे तूफान में तिनकों के समान उड़कर छितरा जाते हैं।
- विनाशकाल के समय बुद्धि विपरीत हो जाती है। ऐसे व्यक्ति के मन में न्याय के स्थान पर अन्याय घर कर लेता है।
- शुभ और कल्याणकारी कार्यों में लगे व्यक्ति के सभी उद्देश्य पूरे होते रहते हैं।
- आग में तपाकर सोने की, सदाचार से सज्जन की, व्यवहार से संत पुरुष की, संकट काल में योद्धा की, आर्थिक संकट में धीर की तथा घोर संकट काल में मित्र और शत्रु की पहचान होती है।
- अच्छे कर्मों से धन लक्ष्मी की उत्पत्ति होती है, चातुर्य से वह वृद्धि करती है, कौशल से जड़ जमा लेती है तथा धीरता से स्थायी होती है।
- जो मनुष्य सदा बुरे कर्मों में लिप्त रहता है, उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, फिर उसे अच्छे में भी बुरे ही कर्म दिखाई देते हैं।
- अच्छाई में बुराई देखनेवाला, उपहास उड़ानेवाला, कड़वा बोलनेवाला, अत्याचारी, अन्यायी तथा कुटिल पुरुष पाप-कर्मों में लिप्त रहता है और शीघ्र ही मुसीबतों से घिर जाता है।
- हर दिन ऐसा कार्य करें कि हर रात सुख से कटे।
- जो कुटुंबी सज्जन होते हैं वे 'तारक' होते हैं और जो कुटुंबी दुर्जन होते हैं वे 'मारक' होते हैं।
- जो काम करके अंतकाल में अकेले बैठकर पछताना पड़े, उसे शुरू ही नहीं होने देना चाहिए।
- जो व्यक्ति बात के मर्म को समझकर उसी के अनुसार कार्य करता है, संसार में उसकी कीर्ति अक्षुण्ण रहती है।
- सज्जनता से अपकीर्ति दूर की जा सकती है।
- शिष्ट व्यवहार से बुरी आदतों को बदला जा सकता है।
- जो व्यक्ति गलत कार्यों से धन कमाकर श्राद्ध, यज्ञ, हवन आदि अनुष्ठान करता है, मृत्यु के बाद उसे इन कर्मों का सुफल नहीं मिलता_ क्योंकि अधर्म से कमाए धन से धर्म अर्जित नहीं होता।
- क्रोध को प्रेम से, दुष्ट को सद्व्यवहार से, कंजूस को दान से तथा झूठ को सच से जीतना

चाहिए।

- सोकर नींद को नहीं जीता जा सकता, शारीरिक तुष्टि द्वारा स्त्री को नहीं जीता जा सकता, लकड़ी डालकर आग को नहीं जीता (बुझाया) जा सकता तथा शराब पीकर उसकी लत को नहीं जीता जा सकता।
- जो पुरुष दान से मित्र को जीत लेता है, युद्ध से शत्रु को जीत लेता है तथा पालन-पोषण से स्त्री को जीत लेता है, उसका जीवन सफल है।
- जो हजारों कमाता है, वह जीता है और जो सैकड़ों कमाता है, वह भी जीता है।
- गलत कार्यों से तरक्की करना, अपने हित-चिंतक की चुगली करना तथा बुजुर्गों से छल करना—ये तीनों कार्य परम पापदायक हैं।
- बढ़-चढ़कर बोलना धन-हानि का कारक है।
- सूख जाने पर पंछी पेड़ को छोड़कर उड़ जाते हैं।
- जो व्यक्ति अपने बुजुर्गों का आदर करता है तथा उनसे परामर्श करता है कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं, वह कभी मोह-माया में नहीं फँसता।
- धैर्य से विषय-वासनाओं तथा भूख को नियंत्रित करें, हाथ-पैरों को आँखों से नियंत्रित व रक्षित करें, मन से आँखों तथा कानों का नियंत्रण व रक्षा करें तथा अच्छे कार्यों से वाणी को नियंत्रित व रक्षित करें।
- बचपन में ऐसे कार्य करें कि वृद्धावस्था सुख से कटे।
- जीवन भर ऐसे कार्य करें कि मरने के बाद भी सुख मिले।
- जो व्यक्ति चोरी-छिपे पाप करता है, उसे यमराज दंड देकर मार्ग दिखाते हैं।
- बुद्धि-बल से किए गए कर्म श्रेष्ठ कर्म होते हैं बाहुबल के मध्यम, जंघा-बल के अधम तथा भार ढोने का कर्म महाअधम कहलाता है।
- बुराई करनेवाला अपने कर्मों से स्वयं ही नष्ट हो जाता है।
- जिस प्रकार कपड़े को जिस रंग में रँगा जाए, उस पर वैसा ही रंग चढ़ जाता है, उसी प्रकार सज्जन के साथ रहने पर सज्जनता, चोर के साथ रहने पर चोरी तथा तपस्वी के साथ रहने पर तपश्चर्या का रंग चढ़ जाता है।
- आलसी, पेटू, ईर्ष्यालु, कुटिल, क्रूर, मूढ़ तथा भद्दे पहनावेवाले व्यक्ति को अपने घर में न रुकने दें।
- मूर्ख, कंजूस, जंगली, कुटिल, नीच का सेवक, क्रूर, शत्रु और कृतघ्न—इन लोगों से मुसीबत में भी सहायता नहीं माँगनी चाहिए।
- अत्याचारी, झूठे, धोखेबाज, चालाक, कपटी तथा आलसी—इन छह प्रकार के लोगों से सदैव दूर रहना चाहिए।
- बुरे लोगों की रुचि दूसरों के गुणों से ज्यादा उनके दुर्गुणों के बारे में जानने में होती है।
- जो पुरुष धर्म, अर्थ और काम का तय समय पर शास्त्रनुसार उपभोग करता है, वह जीते-जी और मृत्यु के बाद भी इन तीनों का उपभोग करता है।
- जिस व्यक्ति को अपने आप पर भरोसा नहीं होता, वह दूसरों का भी भरोसा नहीं करता, इसलिए कोई भी उसका मित्र नहीं होता। ऐसा व्यक्ति अधम पुरुष कहलाता है।
- बेईमानी से, बराबर कोशिश से, चतुराई से कोई व्यक्ति धन तो प्राप्त कर सकता है, लेकिन

सदाचार और उत्तम पुरुष को प्राप्त होनेवाले आदर-सम्मान को प्राप्त नहीं कर सकता।

- जलाए जाने पर भी मदिरा का पात्र गंध नहीं त्यागता।
- कोल्हू में पीसने के बाद भी ईख की मिठास नहीं जाती।
- परोपकार एवं सामाजिक कर्तव्यों से विमुख व्यक्ति ज्ञानवान् होकर भी नीच कहलाता है।
- संसार से विरक्त होने के बाद भी मनुष्य अकेला नहीं होता।
- पूर्ण समर्पण द्वारा किया गया कोई भी कार्य निष्फल नहीं जाता।
- राजा, अग्नि, गुरु और स्त्री—इन चारों की न तो अधिक निकटता ठीक है और न ही दूरी, अन्यथा मनुष्य का सर्वस्व नष्ट हो जाता है।
- अग्नि, जल, स्त्री, मूर्ख व्यक्ति, साँप और राजपरिवार—ये मनुष्य के लिए उपयोगी तो हैं, लेकिन असावधान रहने पर उसके लिए विनाशकारी भी बन जाते हैं। इनके साथ सोच-विचारकर व्यवहार करना चाहिए।
- गंदे वस्त्र धारण करनेवाले, गंदे दाँतवाले, पेटू, कटु वचन बोलनेवाले तथा सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय सोनेवाले मनुष्य को शोभा, स्वास्थ्य, सौंदर्य और ईश्वर भी त्याग देते हैं।
- करछी रस-युक्त शाक में घूमने के बाद भी उसके स्वाद और सार्थकता से अनभिज्ञ रहती है।
- जो धातुएँ बिना गरम किए मुड़ जाती हैं, उन्हें आग में तपने का कष्ट नहीं उठाना पड़ता। जो लकड़ी पहले से झुकी होती है, उसे कोई नहीं झुकाता।
- पशुओं के रक्षक बादल होते हैं, राजा के रक्षक उसके मंत्री, पत्नियों के रक्षक उनके पति तथा वेदों के रक्षक ब्राह्मण (ज्ञानी पुरुष) होते हैं।
- धर्म की रक्षा सत्य से होती है, विद्या की रक्षा अभ्यास से, सौंदर्य की रक्षा स्वच्छता से तथा कुल की रक्षा सदाचार से होती है।
- भक्त, सेवक तथा 'मैं आपका हूँ' कहकर शरण में आए इन तीनों व्यक्तियों को मुसीबत के समय भी नहीं छोड़ना चाहिए।
- अल्प बुद्धिवाले, देरी से कार्य करनेवाले, जल्दबाजी करनेवाले और चाटुकार लोगों के साथ गुप्त विचार-विमर्श नहीं करना चाहिए।
- परिवार में सुख-शांति और धन-संपत्ति बनाए रखने के लिए घर के बड़े-बूढ़ों, मुसीबत के मारे कुलीन व्यक्ति, गरीब मित्र तथा निस्संतान बहन को आदर सहित स्थान देना चाहिए।
- जिस तालाब का पानी पीने योग्य नहीं होता, उसमें बहुत जल भरा होता है।
- उँगली प्रवेश होने के बाद हाथ प्रवेश किया जाता है।
- शेर की कृपा से बकरी जंगल में बिना भय के चरती है।
- कुपुत्र से कुल नष्ट हो जाता है।
- सोलह वर्ष की अवस्था को प्राप्त पुत्र से मित्र की भाँति आचरण करना चाहिए।
- मुंडे मुंडे मतिर्भिन्ना—हर व्यक्ति अलग तरह से सोचता है।
- शठे शाठ्यं समाचरेत्—दुष्ट के साथ दुष्टता का बरताव करना चाहिए।
- आँख के अंधों को दुनिया नहीं दिखती, काम के अंधों को विवेक नहीं दिखता, मद के अंधों को अपने से श्रेष्ठ नहीं दिखता और स्वार्थी को कहीं भी दोष नहीं दिखता ।
- शास्त्र अनंत है, बहुत सारी विद्याएँ हैं, समय अल्प है और बहुत सी बाधाएँ हैं। ऐसे में जो सारभूत है, सरलीकृत है, वही करने योग्य है जैसे हंस पानी से दूध को अलग करके पी

जाता है।

- प्रजा के सुख में ही राजा का सुख और प्रजा के हित में ही राजा को अपना हित समझना चाहिए। आत्मप्रियता में राजा का हित नहीं है, प्रजा की प्रियता में ही राजा का हित है।
- वही सरकार सबसे अच्छी होती है, जो सबसे कम शासन करती है।
- पैसे की कमी समस्त बुराइयों की जड़ है।
- कुबेर भी यदि आय से अधिक व्यय करे तो निर्धन हो जाता है।
- रत्न, रत्न के साथ जाता है।
- हैं। पहला, सुभाषितों का रसास्वादन और दूसरा, अच्छे लोगों की संगति।
- 'अर्थो हि लोके पुरुषस्य बन्धुः।' संसार में धन ही आदमी का भाई है।
- रथ छोटा होने पर भी भार को सँभाल सकता है, लेकिन काठ के बड़े-बड़े लट्ठे वैसा नहीं कर सकते।
- सुख-दुःख, लाभ-हानि, जीवन-मृत्यु, उत्पत्ति-विनाश—ये सब स्वाभाविक कर्म समय-समय पर सबको प्राप्त होते रहते हैं। पाँच लोग छाया की तरह सदा आपके पीछे लगे रहते हैं। ये पाँच लोग हैं—मित्र, शत्रु, उदासीन, शरण देने वाले और शरणार्थी।
- कट जाने के बाद भी चंदन वृक्ष की सुगंध समाप्त नहीं होती।
- निकट आने पर अग्नि जलाकर भस्म कर देती है तथा दूर रहने पर ऊर्जा एवं प्रकाश की कमी हो जाती है।
- ऊँचे आसन पर विराजमान व्यक्ति महान् नहीं होता।
- जो व्यक्ति किसी वृक्ष के कच्चे फल तोड़ता है, उसे उन फलों का रस तो नहीं मिलता है, उलटे वृक्ष के बीज भी नष्ट होते हैं।
- जो व्यक्ति सही समय पर पके फल तोड़ता है, उसे फलों का रस भी मिलता है और बीज से पुनः फल प्राप्त होते हैं।
- काम को करने से पहले विचार करें कि उसे करने से क्या लाभ होगा तथा न करने से क्या हानि होगी? बिना विचारे कोई कार्य न करें।
- साधारण और बेकार के कामों से बचना चाहिए, क्योंकि उद्देश्यहीन कार्य करने से उन पर लगी मेहनत भी बरबाद हो जाती है।
- व्यर्थ बोलनेवाले, मंद बुद्धि तथा बेसिर-पैर की बोलनेवाले बच्चों से भी सारभूत बातों को ग्रहण कर लेना चाहिए, जैसे पत्थरों में से सोने को ग्रहण कर लिया जाता है।
- यश के समक्ष आभूषणों की चमक भी क्षीण है।
- शक्ति का अभाव मनुष्य को ब्रह्मचारी बनने के लिए विवश कर देता है।
- चंदन के लेप की अपेक्षा स्नान द्वारा शरीर की शुद्धि होती है।
- दिन के समय कौए उल्लू को मार देते हैं और रात के समय उल्लू कौए को। युद्ध करने का समय महत्त्वपूर्ण होता है।
- जमीन पर कुत्ता मगरमच्छ को खींच ले जाता है और पानी में मगरमच्छ कुत्ते को। युद्ध करने का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है।
- जरूरत पड़ने पर दुश्मनों का साथ लेकर भी दोस्तों से लड़ जाना चाहिए। बुद्धिमान वही है, जो मौके को भाँपकर अपना काम निकाल ले।

- जरूरत पड़ने पर जैसे भगवान् श्रीराम ने वानर व भालुओं से मैत्री करके अपना काम निकाला, इसी नीति का पालन करना चाहिए।
- दुश्मन को अपनी नहीं, अपने दुश्मन की कमजोरी जाननी चाहिए_ जैसे कछुआ अपने खोल में सिमटकर अपने दुश्मन की हरकतों पर नजर रखता है।
- दरिद्रता, लोभ और असंतोष जब उपजते हैं तो दरिद्रता लोभ को जन्म देती है और लोभी व्यक्ति असंतुष्ट हो जाता है। असंतुष्ट व्यक्ति सबकुछ मटियामेट कर देता है।
- राजा की नौकरी अंगारों पर चलने के समान है, इसलिए बुद्धिमानों को अपनी रक्षा का प्रबंध पहले ही कर लेना चाहिए।
- बोलने से पहले परखें कि आपकी अच्छी बात भी लाभदायक है या नहीं। अच्छी बात भी यदि लाभदायक न हो तो न बोलें।
- अच्छी बात अगर बुरी, पर लाभकारी है तो श्रोता की मरजी होने पर ही उसे बोलें, वरना खामोश रहें।
- अगर राजा शेर की तरह, मंत्री चीतों की तरह और राजकर्मी गिद्धों की तरह हों तो फिर प्रजा का तो भगवान् ही मालिक है।
- मीठे शब्दों का उपहार सबको खुश कर देता है, इसलिए मीठे शब्द ही बोलने चाहिए। मीठे शब्दों की कमी है क्या!
- आंतरिक प्रशासन और विदेश संबंध राज्य की नीति पर निर्भर करते हैं।
- पड़ोसी राज्य संधियों और युद्ध-विषयक गतिविधियों के स्रोत होते हैं।
- मैत्री और शत्रुता के पीछे कुछ कारण होते हैं।
- मंत्रणा में सभी समस्याओं का हल छिपा होता है।
- जहाँ के लोग संपन्न होते हैं, वहाँ नेतृत्व-विहीन देश भी चलता रहता है।
- कूटनीति से जन-कल्याण संभव है।
- जंगल की आग किसी को भी नहीं बख्शती—चंदन के पेड़ों को भी जलाकर खाक कर देती है।
- जब तक दुश्मन की कमजोरी न मालूम हो जाए, उससे दोस्ती रखें। दुश्मन की कमजोर नस पर चोट करें।
- अच्छे व्यवहार से दुश्मन को भी जीता जा सकता है।
- अच्छी बातें यदि अधमों से भी सीखने को मिलें तो उन्हें ग्रहण कर लेना चाहिए।
- बिना प्रयास के भाग्य भी साथ नहीं देता।
- जहर हमेशा जहर रहता है।
- दोस्त भले ही शत्रु का पुत्र क्यों न हो, उसकी रक्षा करनी चाहिए।
- सोने के संसर्ग से ताँबा भी सोना बन जाता है।
- आलसी को न तो इस संसार में और न दूसरे संसार में सुख मिलता है।
- विद्वानों में भी दोष मौजूद होते हैं।
- अत्यधिक मीठी बोली के पीछे घात छिपा होता है।
- अच्छी सलाहों का विरोध नहीं करना चाहिए।
- एक दोष बहुत से गुणों को ढक लेता है।

- ईमानदार और सीधे लोग दुर्लभ हैं।
- प्राण देकर भी वचन का पालन करना चाहिए।
- सत्य को सब सुलभ है।
- निश्चित विनाश से कल्पित विनाश श्रेयस्कर होता है।
- कृतघ्न लोगों की नरक की जगह पक्की है।
- जीभ ही उठाती है, जीभ ही गिराती है। जीभ में ही विष छिपा है और जीभ में ही अमृत छिपा है।
- कड़वी बोली का जख्म कभी नहीं भरता।
- गुरुजन की कभी आलोचना न करें।
- अन्याय कभी बरदाश्त न करें, उसका डटकर मुकाबला करें।
- दानवीर सबसे बड़ा वीर है।
- जिसका बहुत से लोग विरोध करें, उसका साथ न दें।
- सदाचार से आयु और कीर्ति बढ़ती है।
- वश्वासघाती सैकड़ों निकृष्ट जन्म लेता है और दुःख भोगता है।
- यह संसार उम्मीद के धागे से बँधा है।
- माँ जब बच्चे को पीटती है तो वह 'माँ-माँ' चिल्लाता है।
- प्रेमयुक्त क्रोध अल्पजीवी होता है।
- चालाक मान-मनौवल करे तो सावधान हो जाएँ। उसे अपना उल्लू सीधा करना है।
- जैसा शरीर होगा वैसा ही ज्ञान होगा।
- आग में आग नहीं डालनी चाहिए।
- देवी-देवताओं की कभी निंदा नहीं करनी चाहिए।
- सत्य से बड़ा तप नहीं है। सत्य स्वर्ग की सीढ़ी है।
- जो इच्छाओं से भरे होते हैं, उनमें धैर्य का अभाव होता है।
- हंस श्मशान में नहीं मिलते। वहाँ तो कौए और उल्लू बसते हैं।
- गुण के अनुरूप ही शरीर ढल जाता है।
- संतजन का संग स्वर्ग में निवास के समान है।
- प्रभु को अर्पित नैवेद्य कभी व्यर्थ नहीं जाता।
- जो सदाचार नहीं अपनाता, वह लोभ, मोह और काम के बंधन में जकड़ जाता है।
- सत्य और दान धन के मूल हैं
- लोभ ज्ञान को ढक लेता है।
- जो राजा पहले अपनी प्रजा का पेट भरता है, फिर स्वयं बचा-खुचा खाता है, उसे अमृत पीने को मिलता है।
- गलत बातें सिखाना सबसे बड़ा अपराध है।
- जीवन में अवसर केवल एक बार मिलता है। उसे चूक जाने पर पछताने के सिवा कुछ हासिल नहीं होता।
- सफलता और असफलता धूप-छाँव की तरह अवश्यंभावी हैं। इनसे बचना असंभव है।
- पराक्रम से ही मुसीबतों को जीता जा सकता है।

- मन बड़ा चंचल होता है।
- कर्तव्यों के भली प्रकार निर्वहण से श्रीवृद्धि आती है और कर्तव्य के अतिक्रमण से बरबादी।
- शांति और उद्यम सुरक्षा और कल्याण के स्रोत हैं।
- पत्नी, धन, मित्र, संतान और प्रसिद्धि-सब वापस मिल सकते हैं, पर शरीर नहीं।
- कमजोर दुश्मन को भी अनदेखा नहीं करना चाहिए। आग की एक चिनगारी भी जंगल को खाक कर देती है।
- धन-दौलत और मान-सम्मान को देखकर दोस्ती नहीं करनी चाहिए। जब ये चले जाते हैं तो ऐसी दोस्ती टूट जाती है।
- पति-पत्नी का आभूषण है आपसी विश्वास।
- स्वर्ग किसी के लिए भी स्थायी नहीं है। जब तक नैतिकता है तब तक वहाँ रहा जा सकता है।
- गलत भाषा के इस्तेमाल से परिवार-के-परिवार बरबाद हो जाते हैं।
- सभी दुःखों का उपचार चाहते हो तो 'मुक्ति' के उपाय करो।
- हर सुबह दिन भर के कार्यों की योजना बना लेनी चाहिए।
- प्रभु की इच्छा सबको मंजूर करनी चाहिए। उस पर सवाल खड़े करना व्यर्थ है।
- अपने पुत्र की आप प्रशंसा नहीं करनी चाहिए।
- नेक होने से व्यावहारिक होना ज्यादा अच्छा है।
- व्यावहारिक ज्ञान के अभाव में विद्वत्ता मूर्खता के समान है।
- जो काम दोपहर में करने हैं, उन्हें सुबह ही निबटा लें।
- आत्मा ही व्यवहार की साक्षी है।
- जो व्यक्ति झूठी गवाही देता है, वह नरक में पड़ता है।
- व्यक्ति के पापों को उसकी आत्मा ही उजागर करती है।
- अहंकार मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है।
- भरी सभा में अपने शत्रु की भी आलोचना नहीं करनी चाहिए।
- साँप को चाहे जितना दूध पिलाओ, वह जहर ही उगलेगा, अमृत नहीं।
- भूखा मनुष्य सर्वभक्षी बन जाता है।
- दूसरों की दौलत पर नजर न रखें। यह बरबादी का मार्ग है। यह आपकी दौलत भी ले डूबेगी।
- अधम को लज्जा का भय नहीं होता।
- माँ भी अगर दुष्टा हो तो उसे त्याग देना चाहिए।
- चोरों पर कभी भरोसा मत करो।
- सरल काम को भी अनदेखा मत करो।
- अगर आप गुणी होने के बावजूद मूर्खों से घिरे रहेंगे और पशुवत् व्यवहार करेंगे तो आपके सभी सद्गुण उसी तरह छिप जाएँगे जैसे बादलों में सूर्य छिप जाता है।
- दुःख और सुख जीवन के अभिन्न अंग हैं।
- दुष्टों की मदद करने से बचो।
- भिखारियों से गरिमा की उम्मीद करना बेमानी है।

- मूर्ख दूसरों के दोष ढूँढ़ता है, पर अपने नहीं।
- बाहरी व्यवहार से आपके भीतर की झलक मिलती है।
- ज्ञान के प्रकाश से सांसारिक भय से छुटकारा मिल जाता है।
- तपश्चर्या द्वारा स्वर्ग पाया जा सकता है।
- माँ सर्वश्रेष्ठ शिक्षक है। हर स्थिति में उसकी देखभाल करनी चाहिए।
- लज्जा स्त्रियों का कीमती आभूषण है।
- जिसे उपायों की जानकारी हो, वह असंभव को भी संभव बना सकता है।
- कुटिल और लोभियों को ठगना आसान होता है।
- जो सबकुछ पचा लेता है, रोग उसके पास तक नहीं फटकते।
- मूर्खों से बहस करना व्यर्थ है। मूर्खों से मूर्खों की तरह बात करें।
- दया धर्म की जन्मभूमि है।
- जो दूसरों की सहायता के लिए आगे बढ़ता है, वह भला आदमी है। उसकी मुक्ति निश्चित है।
- यश स्थायी होता है।
- विद्या को चोर नहीं चुरा सकते। इसे जितना खर्च करो उतना ही बढ़ती है।
- जो मुसीबत के समय पिता की रक्षा करता है, वही सच्चा पुत्र है।
- मित्रों से शक्ति मिलती है।
- आलसी आदमी नया कुछ अर्पित नहीं करता, बल्कि अपने हाथ की वस्तुएँ भी गँवा देता है।
- आलसी जिस काम में हाथ डालता है, वही रुक जाता है। वह तो अपने सेवकों को भी आदेश नहीं दे सकता।
- उत्तम स्त्री से बढ़कर कोई दूसरा रत्न नहीं है।
- बदनाम होना सबसे बड़ा भय है।
- हजार कुत्तों से एक गाय श्रेष्ठ है।
- चंचलता आदमी का काम बिगाड़ देती है।
- गुस्सा छोड़ो, दुनिया जीतो।
- फूल पाना चाहते हो तो सूखे पौधों को सींचना होगा।
- संसाधनों के बिना काम करना रेत में हल चलाने के समान है।
- वरिष्ठ लोगों की हँसी नहीं उड़ानी चाहिए।
- जो स्वयं पापी होता है, वह दूसरे में भी पाप देखता है।